

योगी गुरु जी के प्रश्नोत्तर — भाग 15

सत्संग से 200 प्रश्नोत्तर

आध्यात्मिक प्रत्यक्ष ज्ञान मार्ग

adhyatmikpratyakshgyan.com

प्रश्न: छात्र जीवन में अपने लक्ष्य पर कंसन्ट्रेंट कैसे करें? (P15-0001)

दो तरह के लोग होते हैं — सफल और असफल। सफल व्यक्ति वह होता है जो अपनी कमियों को देख के निकालता है और जो जैसा है उसका उपयोग करके आगे बढ़ जाता है। असफल व्यक्ति वो होता है जो अपनी कमियाँ देख के छिपाता है और जीवन भर दूसरों में कमियाँ देखता रहता है। दो में से आप कौन से हो, वो देख लेना।

प्रश्न: कभी-कभी मुझे लगता है अध्यात्म फुर्सत में बैठे लोगों का काम है। (P15-0002)

बात तो सही है। ये अध्यात्म उसके लिए है जो संपन्न हो — धन से नहीं, आत्मिक रूप से। अभाव और कुभाव वालों के लिए अध्यात्म नहीं है, वो इस तरफ आएँगे तो दुर्दशा हो जाएगी। इसीलिए ज्ञान मार्ग सर्वश्रेष्ठ बोला गया है और इसमें भीड़ नहीं है, क्योंकि इसमें वही आ सकता है जो बुद्धि से संपन्न हो। लेकिन आलसी नहीं कह सकते; बहुत मेहनत करनी पड़ती है। मैं सुबह से उठता हूँ, रात को डेढ़-दो बजे तक जागता हूँ; सबसे ज्यादा ऊर्जा बोलने में जाती है, सोच-समझ के बोलना पड़ता है। अथाह मेहनत है।

प्रश्न: आत्मा को जानना ही मोक्ष है क्या? (P15-0003)

नहीं। पाप-पुण्य का पूरी तरह भोग भोग के निकल लेना मोक्ष है।

प्रश्न: अध्यात्म और सत्संग से जो रस मिलता है, वो अन्य भोगों से कैसे भिन्न है?

(P15-0004)

अब दोनों का उपयोग करके देख लो, भिन्नता क्या है।

प्रश्न: हमें ईश्वर से क्या माँगना चाहिए? क्या अपनी सारी डिमांड प्रभु के सामने करना उचित है? (P15-0005)

कुछ भी नहीं।

प्रश्न: ध्यान शुरू करते ही ऐसा लगता है जैसे धरती घूमने लगी है, ऐसा क्यों?

(P15-0006)

धरती को घूमने दो, आप ध्यान करो। उसे रोक दोगे तो सृष्टि रुक जाएगी।

प्रश्न: ईमानदारी और सत्कर्म दोनों बंधन हैं या जंजीरें? क्या इससे भी आगे जाना होगा? (P15-0007)

नहीं, यही मेन है। ये जंजीरें नहीं हैं; ये सारे बंधन, सारी जंजीरें खोल देती हैं।

प्रश्न: भगवान से उम्मीद कैसे छोड़ दें गुरु जी? (P15-0008)

बस उम्मीद बनाए ही क्यों? क्या भगवान ने आकर बोला कि मेरे से उम्मीद करो?

प्रश्न: जो जगत के भोगों और इच्छाओं से आलसी हो गया, वही आत्मज्ञान का बड़ा काम कर सकता है? (P15-0009)

आलसी नहीं, चैतन्य हो गया, जागरूक हो गया — जो ये देख पाया कि इसमें कुछ भी नहीं है, और पूरी संपन्नता में स्वभाव में निकलता है। तीन तरह के साधक गृहस्थ जीवन से निकलते हैं: स्वभाव वाला, कुभाव वाला और अभाव वाला। स्वभाव वाला आत्मज्ञान की, स्वयं की खोज में जाता है; कुभाव वाला झगड़ा करके निकला है, तंत्र-मंत्र में चला जाता है, लोगों को दबाएगा; और अभाव वाला धन के चक्कर में घूमता है। अभाव और कुभाव वालों की भीड़ खूब है, स्वभाव वालों की संख्या बहुत कम है। जो स्वभाव में निकला, वो बिना खोजे रह ही नहीं पाएगा।

प्रश्न: सच्चे गुरु की पहचान क्या है? (P15-0010)

जो आपकी सफाई की बात करे, समझ लो कैसा है; और जो आपके पास है (आपके धन) की सफाई की बात करे, समझ लो कैसा है। फैसला आप ले लो कि आपको क्या सफाई करवानी है।

प्रश्न: मैं कनाडा से हूँ — क्या गवर्नमेंट बेनिफिट्स मनी मिलना भी गलत होता है?

(P15-0011)

सरकार जो भी तय करती है, कुछ नियम-नीति होगी; आपने आवेदन किया होगा, मेहनत की है, काम किया है और आपको मिल रहा है तो आप उसके योग्य हैं, हकदार हैं। अब वो देखना है कि कैसे मिल रहा है। मैं बस में सफर कर रहा था, एक जन बोले आपका कार्ड बनवा दूँ, फ्री में पूरा भारत घूमोगे, बस अपाहिज दिखा दूँगा। मैंने कहा मैं स्वस्थ हूँ, मात्र टिकट के लिए अपाहिज बनूँ — भैया ऐसा पास नहीं चाहिए; तो हमने पूरे टिकट से यात्रा की। इस भेष को भी मैंने कभी टिकट के लिए उपयोग नहीं किया। सरकार ने साधु-संतों के लिए कोई बोगी या सीट दी ही नहीं, तो काहे को उपयोग करें।

प्रश्न: जगत में सब भोग हम लेकर आते हैं, फिर दुख क्यों? (P15-0012)

बेईमानी से भोगते हो, इसलिए दुख है।

प्रश्न: मुझे आज्ञा चक्र पर ध्यान लगाते समय घबराहट होने लगी, इसलिए मैंने ध्यान करना बंद कर दिया है। (P15-0013)

ईमानदारी से सत्कर्म करो।

प्रश्न: कैसे पता करें कि ध्यान सही हो रहा है? (P15-0014)

ये तो आप ही को पता चलेगा; कर आप रहे हो तो पता किसे चलेगा?

प्रश्न: प्रभु जी, जब आप सत्संग नहीं करते, शांत रहते हो, तब आपके मन की स्थिति क्या होती है? (P15-0015)

स्थिति मेरी है कि मन की है? मेरी स्थिति कुछ नहीं है।

प्रश्न: मेरे पिताजी को कैंसर हो गया है, तबीयत ज्यादा खराब है — आशीर्वाद दीजिए वो शीघ्र स्वस्थ हो जाएँ। (P15-0016)

उनका ख्याल रखिए और उनकी सेवा करिए।

प्रश्न: आत्मज्ञान के बाद घर-बार छोड़कर आनंदमय हो जाएँ या अपना दैनिक घरेलू जीवन निभाना चाहिए? (P15-0017)

आत्मज्ञान तो पहले हो जाए, फिर पता चल जाएगा कि क्या करना है, क्या नहीं करना है।

प्रश्न: हम इतनी पूजा-भक्ति करते हैं, इतने भाव से करते हैं, लेकिन हमें दुख क्यों है? (P15-0018)

आपको पता है पूजा किसलिए करनी चाहिए? आप कहते हो शांति मिले, दुख दूर हो। अशांति कहाँ से आई है? जो आपने किया उससे आ रही है — गलत काम, जो नहीं करना था। तो गलत काम छोड़ दो, शांति आ जाएगी; इसमें पूजा-पाठ से क्या मतलब? पूजा-पाठ का मतलब होता है "कुछ नहीं चाहिए"। अगर कोई इष्ट बना लिया तो उससे प्रार्थना करनी है कि मुझे निर्विकार होने की शक्ति दो, और उसके लिए कर्म करना पड़ेगा, क्योंकि कर्म करके हमने विकार धारण किया है। ताला जिस चाबी से बंद होता है उसी से खुलता है; कर्म करके गंदा किया है तो कर्म करके ही शुद्ध कर सकते हैं। पूजा अगर "चाहिए" के लिए कर रहे हो तो उस पूजा का कोई मतलब नहीं। अगर किसी को इष्ट मानते हो तो उसके चरित्र को भी अपनाना पड़ेगा, और साथ में पूरी तरह ईमानदारी और सत्कर्म अपनाना पड़ेगा, तब पूजा-पाठ का मतलब है। नहीं तो पूजा-पाठ करके और भटक जाओगे, अपना पतन कर लोगे। सर्वप्रथम ईमानदारी, सत्कर्म, बाद में पूजा-पाठ।

प्रश्न: पहले मैंने गुरुओं से नाम-दीक्षा ली, वो ज्ञान भी देते थे, पर पूरा नहीं लगा, इसलिए आपके पास आया हूँ। (P15-0019)

अगर हमें प्यास लगी और एक आदमी ने कहा मैं पानी पिलाता हूँ, और उसके पानी पिलाने के बाद भी हम कह रहे हैं मुझे प्यास लगी है, तो मतलब उसने पानी नहीं पिलाया, बस पानी पिलाने का भ्रम था। मैं भी खोजी था। अगर मैं किसी के पास गया और वही खोजने फिर आगे जा रहा हूँ, तो इसका मतलब उससे नहीं मिला। किसी को पकड़िए मत; पकड़िए अपने आप को, ज्ञान को और समझ को। लेकिन ईमानदार रहो — मिला तो मिला, नहीं मिला तो नहीं मिला, इतनी ताकत होनी चाहिए बोलने की। ज्ञान किसी व्यक्ति-विशेष का नहीं होता, गुरु ज्ञान का प्रतीक होता है। जैसे बिजली हर जगह अलग-अलग बल्ब में जल रही है पर स्रोत एक है, पानी के नल अनेक हैं पर पानी एक जगह से आ रहा है, वैसे ही ज्ञान एक ही जगह से उतरता है, निमित्त अनेक हो जाते हैं। ना राग में फँसना है ना द्वेष में, अपना आत्मिक कल्याण करके निकल जाना है। आखिर में गुरु भी छूट जाएगा — जैसे एक काँटा धँसा तो दूसरे काँटे से निकाला और दोनों को फेंक दिया। ज्ञान भी छूटेगा तभी पहुँचोगे; अज्ञान छोड़ के ज्ञान पकड़ लिया तो भी नहीं पहुँच पाओगे, दुकान खोले बैठे रहोगे। ज्ञान का उपयोग करके अपने आप को निकाल लो, फिर ये ज्ञान भी तुमको छोड़ देगा, तब बुद्धिमान हो।

प्रश्न: गुरु जी, जप से कुछ असर नहीं होता, इसका मतलब मेन चीज़ कर्म से होती है? (P15-0020)

मुँह से शब्द निकल रहा है, ये कर्म नहीं हुआ। भूख लगी है तो जप करने से भोजन मिल जाएगा, या भोजन पका के खाने से? शरीर ही तो साधन है उस साध्य तक पहुँचने का; भूखे भजन न होय गोपाला। जप जिस भाव से करते हो — भाव में ईश्वर का वास है; जैसे वाल्मीकि जी "मरा मरा" से शुरू करके तभी उठे जब उपलब्धि हो गई। यहाँ तो लोग मिनट गिनते हैं कि इतने मिनट में इतनी माला। अगर आपने बेईमानी का त्याग कर दिया, ईमानदारी अपना ली, सत्कर्म कर रहे हो, तब जप करने का मतलब है। जैसे एक शराबी सौ रुपये कमा के शराब पी के घर पहुँच जाता है, उसे हजार दे दो तो नाली में पड़ा रहेगा; वैसे ही बेईमानी में जीवन है और जाप करोगे तो और पतन हो जाएगा। पहले ईमानदारी और सत्कर्म अपना लो, फिर जाप करो। ये आवेश-जड़बात का मार्ग नहीं है, आराम-आराम से समझ के यात्रा करो।

प्रश्न: जो अस्तित्व बिल्कुल वर्तमान क्षण में है और जिसका आदि-अंत नहीं है, उसी से मैं निकला हूँ, मैं वही हूँ — क्या यह धारणा ठीक है? (P15-0021)

धारणा से कुछ नहीं होगा। धारणा अपने भाव से, अपनी प्लानिंग से बनती है। आप अपने आप को छुड़ाएँ — कितनी जगह आप फँसे हो, देखिए, धीरे-धीरे अपने आप को हर जगह से छुड़ाएँ, उम्मीद से अपने आप को मुक्त कराएँ; तभी वर्तमान में हो पाओगे, सब कुछ होगा।

प्रश्न: हम कैसे जानें कि अध्यात्म में हमारी उन्नति हो रही है? (P15-0022)

ये आप ही को पता चलेगा। जब आप भोजन करते हो तो भूख मिटी कि नहीं, आप ही को पता चलता है, खेलाने वाले को नहीं। पानी पीते हो तो प्यास मिटी कि नहीं, ये आप ही को पता चलता है।

प्रश्न: ज्ञान क्या है? (P15-0023)

अज्ञान को छुड़ा दे, वो ज्ञान।

प्रश्न: प्रत्यक्ष ज्ञान होने पर क्या सभी कर्म समाप्त हो जाते हैं? (P15-0024)

ज्ञान हो गया तो बात ही खत्म, फिर कर्म में रहा कहाँ? फिर वो कर्ता में नहीं रहा, करने वाला खत्म हो गया, अब बस हो रहा है। हो तो भी ठीक, ना हो तो भी ठीक — ना होने में सुख, ना ना होने में दुख।

प्रश्न: जैसे रामकृष्ण परमहंस को काली माता प्रत्यक्ष दिखती थीं, वैसे गुरु जी आपको कौन सी शक्ति दिखती है? (P15-0025)

ऐसा कुछ भी नहीं है, मैं अपने काम में पड़ा रहा, ऐसे में गया नहीं। हाँ, मुझे आप लोग दिख रहे हो, मैं आपको दिख रहा हूँ — ये शक्ति कम है क्या? आप लाइव में प्रश्न कर रहे हैं, ये प्रश्न पढ़े जा रहे हैं, लाखों लोग देख सकते हैं — यही शक्ति है। अगर वो शक्ति न रहे तो कैसे पढ़ोगे? मुर्दे थोड़ी ना बोलते हैं। इसका उपयोग करके हम अपने आप को सुधार रहे हैं। कल्पना में तो आप किसी की भी मूर्ति बना सकते हो।

प्रश्न: गुरु के पास आकर एकदम रिलैक्स हो गया — क्या गुरु की यही पहचान है? अगर रिलैक्स नहीं हो रहे तो गुरु में कमी है या शिष्य में? (P15-0026)

दो में से एक में कमी है। लेकिन एक बात बता दूँ — अगर गुरु सही है और शिष्य में कमी है, तो वो वहाँ रुक नहीं पाएगा; रुक गया तो सध जाएगा। योग्य गुरु के पास टिकना साधारण बात नहीं है; सधोगे तभी रुक पाओगे। आपको कुछ न कुछ त्यागना पड़ेगा, जो भरे-भरे घूम रहे हो वो छोड़ना पड़ेगा।

प्रश्न: विदेह ज्ञान या विदेह गुरु क्या होता है, इसकी परिभाषा क्या है? (P15-0027)

विदेह राजा जनक को बोला गया है — शरीर में रहने के बाद भी शरीर का भान नहीं था।

प्रश्न: आपका भी बहुत जल्दी बड़ा आश्रम बनने वाला है; प्रत्यक्ष ज्ञान लेने वाले ही आपको अप्रत्यक्ष रूप में धन प्रदान करेंगे — ऐसा मेरा मानना है। (P15-0028)

कुटिया तो बनानी ही पड़ेगी ना; लोग आएँगे तो व्यवस्था करेंगे क्या? अगर अधर्म का इतना बड़ा बन सकता है तो धर्म का क्यों नहीं बनेगा, धर्म का क्या झोपड़ी ही रहे? सच्चाई का, प्रत्यक्ष का प्रचार नहीं करोगे तो क्या उसे एक जगह रख दोगे? हॉल नहीं बनाए, सौ कमरे नहीं बनाए, तो लोग आएँगे तो रहेंगे कहाँ? अगर लोगों तक ये पहुँचाना है, समाज को लाभ देना है, तो सब व्यवस्थाएँ देनी पड़ती हैं।

प्रश्न: आनंद का भोक्ता कौन है? (P15-0029)

आनंद में भोक्ता रह नहीं जाता है।

प्रश्न: कंफर्ट ज़ोन में रहकर क्या ध्यान हो सकता है — स्थान सुरक्षित भी रहे, भंग भी ना हो और ध्यान भी हो जाए? (P15-0030)

ध्यान तो आपको कर्म में करना पड़ेगा। अगर एक जगह बैठते भी हो तो देखिए कि कहाँ-कहाँ गलतियाँ हो रही हैं, कैसे इन्हें सुधार सकते हैं — ये ध्यान है। ध्यान का मतलब अपने आप को छुड़ाना: पहले देखना, और देखकर फिर छुड़ाने के लिए काम करना।

प्रश्न: जो अपने खाने तक के लिए किसी और पे निर्भर हो, वो औरों को आत्मनिर्भरता का संदेश कैसे दे सकता है? (P15-0031)

नहीं दे सकता। मेरा तो कहना है कि मेहनत से ही खाना चाहिए। आपकी थाली में भोजन आया तो आपको पता हो जाएगा कि आप मेहनत कर रहे हो कि नहीं।

प्रश्न: अगर हमें परिक्रमा करनी हो तो कैसे करें और संकल्प क्या लेना चाहिए? (P15-0032)

मेरा कर्ता से मुक्त होने के लिए, निर्विकार होने के लिए — ऐसा संकल्प। ओंकारेश्वर से परिक्रमा उठाते हैं; अब कहाँ की परिक्रमा उठाना चाहते हो वो देख लो, कई परिक्रमाएँ होती हैं।

प्रश्न: निर्दोष लोगों को कैसे न्याय मिले? उम्मीद छोड़ता हूँ तो शरीर असमर्थ हो जाता है। (P15-0033)

निर्दोष अगर कोई है और उसके ऊपर कोई दोष लगाया है, तो उसे निर्दोष होने के लिए सिद्ध तो करना पड़ेगा।

प्रश्न: जब अक्षर नहीं था तब कौन सा ज्ञान था? प्रकृति माया, योग माया, आत्मज्ञान और परमात्मा क्या है — चारों का विश्लेषण करें। (P15-0034)

ऐसे प्रश्न का कोई जवाब नहीं। इनके उत्तर लिखने में हज़ारों साल लग गए और आप एक मिनट में, वो भी फोन पे जानना चाहते हैं। इसके लिए पूरी जिंदगी लगानी पड़ेगी, काम करना पड़ेगा। और आप इस उत्तर को लेके करोगे क्या? जरूरत क्या है आपकी?

प्रश्न: उम्र के साथ शरीर और बुद्धि भी कमजोर हो जाती है, फिर कोई व्यक्ति आत्मनिर्भर कैसे रह सकता है? (P15-0035)

नहीं, बुद्धि कमजोर नहीं होती, शरीर भले हो जाए। इंद्रियाँ जिस हिसाब से ग्रहण कर रही थीं, वो ग्रहण करने की क्षमता कम हो जाती है, और बाहर निकालने की क्षमता भी कम हो जाती है।

प्रश्न: क्या पितरों की शांति के बिना आत्मज्ञान और इष्ट के दर्शन हो सकते हैं?

(P15-0036)

पितरों को जहाँ जाना था, अपने कर्मों से गए; जो जैसा करता है वो निकल लेता है। आपको क्या करना है वो देख लो, सबके अपने-अपने कर्मों के परिणाम हैं।

प्रश्न: सनातन धर्म का वास्तविक अर्थ क्या है? (P15-0037)

सत का नाश कभी नहीं होता। सनातन का मतलब — जिसका नाश नहीं होता, वो सत है।

प्रश्न: शरीर में अगर आंतरिक विकार हो जाएँ तो क्या वो ठीक हो जाते हैं?

(P15-0038)

आपके अंदर आंतरिक विकार हैं तो निर्विकार होने के लिए काम करो।

प्रश्न: समाधि क्या है? आपका भाव जानना चाहते हैं। (P15-0039)

चार दिशा, चार कोण, एक ऊपर, एक नीचे — दस दिशाओं में भोगी यात्रा करते हैं। फिर इन्हीं दिशाओं में खोजी यात्रा करता है। जब खोज भी खत्म हो जाती है, खोजने के लिए भी कुछ नहीं बचता, तब वो बस होता है — वो समाधि की स्थिति है; उसे चाहे अवधूत भी कह सकते हैं।

प्रश्न: क्या पाप कर्म से पुण्य कर्मों का नाश होता है? (P15-0040)

नहीं। पुण्य का हिसाब पुण्य मिलता है, पाप का हिसाब पाप मिलता है। सत्कर्म करने से निर्विकार होने में सहायता मिलती है, विकारों का नाश होता है।

प्रश्न: जब जीवन में कोई समस्या आती है तो स्वयं ही सही लगता है और सामने वाले की गलती लगती है — ऐसा क्या करें कि खुद की गलती समझ कर दूर करें?

(P15-0041)

समझ को बढ़ाइए। समझ कम होने की वजह से सामने वाले की गलती लगती है। कभी-कभी सामने वाले की भी गलती होती है; तो जिसकी भी गलती है उसे सिद्ध कर दीजिए — इतनी क्षमता आप में होनी चाहिए।

प्रश्न: अंधविश्वास किसे कहते हैं? (P15-0042)

जैसे दो व्यक्ति दुकान पर गए, दुकानदार ने दोनों से कहा कल सामान लाऊँगा। अगले दिन भी नहीं लाया। एक बोला ठीक है, हम दूसरी दुकान से ले लेंगे। दूसरे के पास पैसा नहीं था, वो रोज़ कहता रहा कल लेते आना, और फिर लोगों से बोला कि मैंने उस पर विश्वास किया और वो नहीं लाया। वो विश्वास नहीं था, तुम्हारी कमजोरी की वजह से अंधविश्वास था। विश्वास का एक दायरा है; जब विश्वास से ज्यादा विश्वास करते हो, आपके पास कोई ऑप्शन नहीं होता, तो आप अंधविश्वासी हो जाते हो। अपने अंधविश्वास को विश्वास का नाम मत दो, विश्वास को अंधविश्वास मत बनाओ, अपनी कमजोरी को दूर करो।

प्रश्न: मन की सकारात्मक ऊर्जा को जागृत और जागरूक कर नियमित कैसे रखें?

(P15-0043)

ईमानदारी अपना के सत्कर्म करें। सत्कर्म करने से अनेक लोगों का आशीर्वाद मिलता है, उससे आपकी शारीरिक एनर्जी जागृत होती है। तामसी और राजसी काम छोड़ के सात्विक तरीके से, उचित तरीके से काम करिए।

प्रश्न: आत्मज्ञान में सबसे बड़ी बाधक कौन-कौन सी बातें हैं और उन्हें दूर कैसे करें?

(P15-0044)

अपने तरीके से चाहिए, योग्यता से ज्यादा चाहिए; कर्म करते हुए छल, कपट, चोरी, बेईमानी, चालाकी, मक्कारी, धोखा, पाखंड; मान की इच्छा, बड़ा या छोटा बनने की इच्छा, किसी को नीचा दिखाने की इच्छा, बिना मतलब किसी की भावनाओं को ठेस पहुँचाना — यही बाधक हैं।

प्रश्न: क्या अष्टांग मार्ग से आत्मज्ञान किया जा सकता है? (P15-0045)

मैं उसके बारे में कुछ नहीं बोल सकता, लेकिन इतना मेरे जीवन में पक्का है कि ईमानदारी से जीवन जीते हुए, सत्कर्म करते हुए आत्मज्ञान तक पहुँचा जा सकता है; इसमें कोई भी संशय नहीं है। ये बात आप जहाँ भी बोलोगे, कोई इसे कच्चा नहीं कह सकता।

प्रश्न: सत्संग का मतलब समझाइए। (P15-0046)

जहाँ मतलब से निकलने की बात हो, उसी को सत्संग कहते हैं।

प्रश्न: आत्मज्ञान होने के बाद का जीवन कैसा होता है? (P15-0047)

जीवन होता है।

प्रश्न: भगवत्-प्राप्त संतों की समाधि के दर्शन करने से क्या पुण्य होता है?

(P15-0048)

बात पाप-पुण्य की नहीं है। आप उनके दर्शन करोगे, फिर उनके चरित्र के बारे में, उनके त्याग के बारे में जानोगे, तो एक प्रेरणा मिलती है।

प्रश्न: क्या आत्मज्ञान फैमिली में रहकर संभव नहीं है? (P15-0049)

एकदम संभव है, क्यों संभव नहीं है? जहाँ भी रहो, बेईमानी छोड़ दो, ईमानदारी पकड़ लो।

प्रश्न: ध्यान में मौत का डर लगता है, छूटने का भय बना रहता है — मार्गदर्शन करें।

(P15-0050)

कुछ आपको चाहिए, वो छूट ना जाए, इसलिए डर लगा रहता है।

प्रश्न: मेरे पिताजी को लकवा हो गया है, कैसे ठीक होंगे? (P15-0051)

सही तरीके से इलाज कराइए, परहेज़ करिए। सुबह साढ़े तीन से चार बजे जो हवा चलती है वो स्वास्थ्य के लिए बहुत लाभदायक होती है; उसमें उन्हें बाहर खुली हवा में घुमाएँगे तो बहुत लाभ होता है।

प्रश्न: आप कहते हैं मन कुछ नहीं है, और गीता में कृष्ण भगवान कहते हैं अर्जुन मन मुझमें लगा — इसका मतलब क्या? (P15-0052)

वो उस देश, काल, स्थिति-परिस्थिति में कह रहे हैं, और मैं इस स्थिति में कह रहा हूँ; उसे समझने का प्रयास करिए। "मन यहाँ लगा" का मतलब है "तू यहाँ लग"। सिर्फ एक बात को मत पकड़िए; हम एक-दो लाइन पकड़ लेते हैं और बाकी छोड़ देते हैं, आखिर में और भी कहा है।

प्रश्न: मन को कैसे वश में करें? बहुत भटकाव है। (P15-0053)

जो आपके द्वारा चल रहा है, उसको क्या वश में कर रहे हो? छोड़ दो उसे, अपना काम करो। क्यों समय बर्बाद कर रहे हो?

प्रश्न: गुरु जी, रूप और काम भाव नहीं जा रहा है। (P15-0054)

कोई बात नहीं, ईमानदारी से करो, बस बेईमानी ना हो। समझ के करो और निकल जाओ।

प्रश्न: मैं बहुत दुखी हूँ, सब कुछ घर-बार छोड़कर दूर पहाड़ों पर जाना चाहता हूँ और वहाँ भक्ति करना चाहता हूँ। (P15-0055)

दुखी होके मत जाइए। कभी भी भक्ति करने या खोज करने जाइए तो अभाव-कुभाव में मत जाइए, स्वभाव में जाइए; अगर अभाव-कुभाव में गए तो जीवन भर भटकते रहोगे। पहले दुख दूर करिए और संपन्न होइए, तब घर से निकलिए, नहीं तो जीवन भर वो कमी आपका पीछा करेगी। मजबूरी में, लाचारी में मत छोड़िए; ज्ञान की खोज के लिए, स्वभाव में छोड़िए।

प्रश्न: आत्मज्ञान का मतलब क्या है? (P15-0056)

स्वयं का ज्ञान।

प्रश्न: क्या बिना जीवित गुरु के आत्मज्ञान हो सकता है? (P15-0057)

बिना जीवित गुरु के, तो क्या मुर्दा गुरु चाहिए? जीवित गुरु में क्या परेशानी, क्या दिक्कत आ रही है?

प्रश्न: ध्यान कैसे करें? (P15-0058)

ध्यान में ध्यान करिए। जब भी कर्म करिए, अपने लिए या किसी और के लिए, इतना ध्यान रखिए कि कोई गलती ना हो जाए। ईमानदारी से जीवन जीना और सत्कर्म करना।

प्रश्न: आपको आत्मज्ञान कैसे हुआ? आपके जीवित गुरु कौन हैं? (P15-0059)

सब गुरुओं ने छोड़ दिया, बचा मैं, निकल लिया। 2011 से 20 में अपने आप प्रश्न हट गए, उत्तर हो गए।

प्रश्न: क्या संसार और शास्त्रों के सहारे, बिना जीवित गुरु के, आत्मज्ञान नहीं हो सकता? (P15-0060)

अगर स्कूल से शिक्षक हटा दिया जाए और गाइड दे दी जाए, तो बच्चे पढ़ सकते हैं? कभी नहीं, एक जीवित शिक्षक की जरूरत होती है। वैसे ही जीवित गुरु की जरूरत होती है — भले आप उसे गुरु करें या ना करें, वो बात अलग है, उसे सुनना तो पड़ेगा, उसके साथ रह भी लेंगे। अपने को देखने के लिए शीशा तो चाहिए, वो शीशा आपका हो या किसी का; गुरु दर्पण है। गुरु ज्ञान का प्रतीक है; ज्ञान लेके आगे बढ़ो, ज्ञान आगे बढ़ाएगा, दीक्षा तो आगे बढ़ाएगी नहीं, एक मानसिक बंधन हो जाता है। तो मानसिक बंधन भी क्यों? ज्ञान ही चाहिए ना, ऐसे लो।

प्रश्न: जहाँ हम पहले गए, वहाँ बिना गुरु-दीक्षा लिए कोई भाव ही नहीं देता था — आज जिस तरीके से दीक्षा दी जा रही है, उसके बारे में क्या कहेंगे? (P15-0061)

शास्त्रों में कहा गया है कि एक शिष्य बनाने पर अगर उसका आत्मिक कल्याण नहीं हुआ, तो सौ गौ-हत्या का पाप लगता है — गुरु को, शिष्य को नहीं, शिष्य तो अबोध है। उसकी योग्यता नहीं थी तो दीक्षा क्यों दी? योग्य बनाने की क्षमता नहीं थी, तो उसे फँसाया क्यों? अगर आप इतने साल बाद कह रहे हो तेरी योग्यता नहीं, तो पहले दिन बोल देते कि योग्यता लेके आ, तब दीक्षा दूँगा — ये सच्चे गुरु की पहचान है। भीड़ बढ़ाने के लिए, संख्या बढ़ाने के लिए कि मेरे इतने शिष्य हैं, आत्माओं को भटका रहे हैं। कितनी उम्मीद से कोई इस मार्ग में जाता है कि मुझे आप सन्मार्ग बताओगे।

प्रश्न: अगर मैं यहाँ नहीं रुक सकता, तो क्या मैं आत्मज्ञान का अधिकारी नहीं हूँ? (P15-0062)

अधिकारी तो आप हैं ही। वो आपको देखना है कि कमी कहाँ है। मुझमें हो तो मुझे बताओ, आप में है तो आप देखो; जा रहे हो तो बता के जाओ कि कमी कहाँ है। यहाँ हो तो मैं उस कमी को दूर करूँगा। मैं तो इतना खुला बोलता हूँ — ज्ञान में कमी हो, रहने में, भोजन में, कोई आपको तकलीफ दे रहा है, हम तो आपकी सहायता ही कर सकते हैं। इतने के बाद भी नहीं रुकते तो जाते वक्त इतना भी पूछ लेता हूँ कि घर तक का किराया है कि नहीं। इतना खुल के बोलने के बाद भी कोई बिना बताए जाता है, तो बहुत बड़ी कमी उसी में है।

प्रश्न: मैंने संन्यास लिया, पर उसके बाद अंदर उदासीपन आ गया, वहाँ रुक नहीं सका; अब गुरु के दूसरे आश्रमों में जाने का मन ही नहीं करता। (P15-0063)

यहाँ मैं आप लोगों से एक ही बात कहूँगा — आपको यहाँ कोई बंधन नहीं है। आप किसके शिष्य हैं, किस मार्ग से चल रहे हैं, किसे गुरु मान के चलते हैं, मुझे मतलब नहीं। आपके आत्मिक कल्याण के लिए ज्ञान से, रहने से, भोजन से जितनी सहायता मेरी तरफ से हो सकती है, मैं करूँगा; एक दिन से लेके आजीवन रहिए। यहाँ व्यक्तिगत मेरा कोई मार्ग नहीं, कोई विधि नहीं; प्रत्यक्ष ज्ञान है, और ज्ञान किसी का होता नहीं। आप किसी भी मार्ग से जाएँ, इस ज्ञान का उपयोग करना पड़ेगा। यहाँ का कोई मालिक नहीं — ना मैं ना आप; ये व्यवस्था साधकों के लिए है, तो अधिकार से, बिना संकोच, बिना दबाव साधक बनके रह सकते हैं। आपस में बहस करो, पर उस तर्क में प्रेम हो, समझने के लिए बात हो, समझाने के लिए नहीं। जब समझाने के लिए बात होती है तो तर्क कुतर्क में जाता है, और कुतर्क में आदमी सामने वाले को नहीं, अपने आप को गिराता है।

प्रश्न: आप कहते हो बेईमानी छोड़ दो, लेकिन पुराने संस्कार छोड़ने कहाँ देते हैं? संकल्प करके कोशिश करता हूँ तो संस्कार से हार जाता हूँ — क्या करें? (P15-0064)

तो परिणाम के लिए तैयार रहिए। बेईमानी की मात्रा बढ़ा दो तो परिणाम भी उसी मात्रा में और बहुत जल्दी मिलेगा।

प्रश्न: मुझे कुछ नहीं चाहिए, लेकिन दूसरों की सेवा का विचार रहता है — क्या ये चाहत गलत है? (P15-0065)

देखिए, सेवा का विचार किसका रहता है — अपने लोगों का, या समाज के उन लोगों का जहाँ जरूरत है? मान के लिए, सम्मान के लिए, वैभव के लिए, पुण्य के लिए, या जरूरतमंद के लिए — यह भाव देख लीजिए।

प्रश्न: कहते हैं कैलाश पर भी ओम का नाद हो रहा है — ओम को कैसे समझ सकते हैं? (P15-0066)

ओम को समझना है कि अपने आप को? हमें अपने आप को समझना है, तो बस ओम को छोड़ दो। बिना अपने आप को समझे ओम को कैसे समझोगे? सिर्फ एक जानकारी रहेगी। एक ही रास्ता है — अपने आप को समझ लो, तो सबको समझ लोगे। और सबको समझना चाहोगे तो अपने आप से वंचित रह जाओगे। ऊर्जा एक ही जगह लगा सकते हो — बाहर लगा दी तो अंदर नहीं, अंदर लगाई तो बाहर नहीं।

प्रश्न: सत्कर्म और निष्काम कर्म में क्या फर्क है? (P15-0067)

एक ही है, फर्क नहीं है, नाम अलग-अलग हैं।

प्रश्न: कौन सा शिष्य योग्य है, कौन अयोग्य — ये गुरु द्वारा कैसे तय किया जाता है? शिष्य गुरु चुनता है या गुरु शिष्य? (P15-0068)

शिष्य गुरु चुनता है। गुरु को शिष्य चुनने की जरूरत नहीं होती, क्योंकि गुरु चुनने से मुक्त हो जाता है। शिष्य को गुरु चुनना पड़ता है; शिष्य होना बड़ा कठिन काम है।

प्रश्न: इंद्रियों पर कंट्रोल कैसे करें? (P15-0069)

अपने आप पे कंट्रोल कर लो, आपसे ही इंद्रियाँ चलती हैं।

प्रश्न: क्या भगवान की भक्ति करनी चाहिए? (P15-0070)

कर सकते हो, आपके ऊपर है।

प्रश्न: क्या जन्म-पत्रिका या राशि में जो लिखा होता है वो सच होता है, या जो होता है सब समय का खेल है? (P15-0071)

जो भी आपके जीवन में हो रहा है वो आपके कर्मों का खेल है। जैसा आप कर्म करते हो, वैसा आपको परिणाम मिलता है।

प्रश्न: हम शरीर नहीं हैं, आत्मा हैं — कैसे जानें? (P15-0072)

अनेक जगह अपने आप को फँसाए हो — कामनाओं में, इच्छा-अपेक्षा में — बस वहाँ से अपने आप को निकाल लो।

प्रश्न: अपने आप को कैसे समझें, खुद को कैसे जानें? (P15-0073)

राग-द्वेष में जो दूसरों को जानने का प्रयास कर रहे हो, वो करना बंद करो; सदुपयोग करो, दुरुपयोग नहीं, और आगे बढ़ो। जरूरतमंद की सेवा करो, सत्कर्म करो, ईमानदारी से जीवन जियो, बेईमानी का पूरी तरह त्याग करो। राग-द्वेष से और उम्मीद से अपने आप को छुड़ाओ — अनेक लोगों से अनेक तरह की उम्मीदें बना के रखी हैं। अपने को समझना नहीं है; जितना आपने समझा है, उसे बस छोड़ देना है, ये भ्रम छोड़ दो कि मैंने कुछ समझा। आपके पास सिर्फ जानकारियाँ हैं, आपने जानकारी को समझ बना लिया — अप्रत्यक्ष को प्रत्यक्ष समझ लिया, यही गलती हो गई। किसी का भी उपयोग सात्विक तरीके से करो, अपनी आत्मरक्षा और स्वाभिमान की रक्षा करते हुए, और दूसरों के आत्मसम्मान की रक्षा का भी विशेष ध्यान रखते हुए।

प्रश्न: अगर कोई बच्चा जन्म से ही अंधा या लंगड़ा पैदा हुआ है, उसने तो कोई कर्म नहीं किया, फिर ये परिणाम क्यों मिला? (P15-0074)

ये तो जिसके द्वारा पैदा हो रहा है वही बताएगा। एक राजा, एक रंक; एक गरीब, एक अमीर; एक स्वस्थ, एक अस्वस्थ — कुछ तो बात होगी, क्योंकि वो अबोध है, उसे कर्म का पता ही नहीं; कुछ तो अगला-पिछला जन्म होगा। इसे समझना है तो स्वयं को समझो और उस परम ब्रह्म से मिलो जो निर्माण करता है। जैसे आपने यह कपड़ा किस उद्देश्य से, किस भाव से पहना, ये आप ही बता सकते हो।

प्रश्न: सभी प्राणी अपने स्वभाव में जीते हैं, फिर उन्हें आत्मज्ञान क्यों नहीं होता?

(P15-0075)

जितने भी जीव हैं वो भोग और भोजन के लिए घूमते रहते हैं, और वो अपनी अशांति किसी के यहाँ आकर प्रकट नहीं करते। हम अपनी अशांति प्रकट कर रहे हैं, हर किसी को बता रहे हैं कि मैं अशांत हूँ; इसलिए हमें अशांति से मुक्त होने के लिए काम करना है। वो और जीव ज्ञान में हैं या अज्ञान में, बिना उनसे बात किए कैसे समझ लेंगे? इसलिए अपने आप को समझो, किसी के बारे में निर्णय नहीं किया जा सकता।

प्रश्न: गुरु जी, कुछ ऐसा ज्ञान दीजिए कि (दुख) कभी सुनने-देखने को ना मिले।

(P15-0076)

उम्मीद छोड़ दो।

प्रश्न: संसार को योगी की तरह कैसे भोगें? (P15-0077)

बस छोड़ने के लिए भोग करें और आगे बढ़ें।

प्रश्न: परमात्मा को प्रेम करने का अधिकारी वही होता है जिसने इंसान को प्रेम किया हो? (P15-0078)

"मैं तो परमात्मा से प्रेम कर लूँगा, लेकिन ईर्ष्या और बेईमानी करता रहूँगा" — मरने के बाद प्रेम करोगे क्या?

प्रश्न: आत्म-संयम और आत्मबल का क्या भाव होता है? (P15-0079)

आत्म-संयम मतलब अपने आप पे संयम रखना। आत्मबल तब मिलेगा जब आप ईमानदारी से जीवन जीते हुए सत्कर्म करोगे; तब अपने आप को बल मिलेगा, और जब बल मिलेगा तो आत्म-संयम रख पाओगे, फिर धीरे-धीरे अपने आप में स्थिर हो जाओगे।

प्रश्न: हमारा अज्ञान कैसे दूर हो कि आत्मज्ञान का मार्ग मिले? (P15-0080)

सत्कर्म अपनाइए, ईमानदारी से जीवन जियो और सत्संग सुनिए, समझ में आ जाएगा।

प्रश्न: आत्मा और चेतना में क्या अंतर है? (P15-0081)

एक ही है। कोई आत्मा को भी चेतना कहता है, कहते हैं चेतना को उठाओ, ऊपर ले जाओ। चेतना को ना घटाना है ना उठाना है; अपनी समझ को बढ़ाना है और बाहर से अपने आप को छुड़ाना है। वो अपनी जगह स्थिर है, आप उसे उठा-बैठा नहीं सकते।

प्रश्न: आत्मा परमात्मा में मिल जाए तब सुख है, या आत्मा परमात्मा की सेवा करे?

(P15-0082)

आत्मा परमात्मा की सेवा कैसे कर सकती है? सेवा करनी है तो ईमानदारी से सत्कर्म करो; परमात्मा ने जिसको बनाया उसकी सेवा करो, जरूरतमंद की सेवा करो, वो सेवा वहाँ तक पहुँचेगी। सीधा परमात्मा की सेवा कैसे कर सकते हो?

प्रश्न: लोग कहते हैं "अपना आपा खो दिया" — इसका क्या भाव है? (P15-0083)

आपा खो दिया मतलब जड़बात में आ गया, आवेश में आ गया, वो कर रहा है जो उसे नहीं करना चाहिए।

प्रश्न: जीव और जीवात्मा में क्या अंतर है? (P15-0084)

पहले आत्मा, बाद में जीवात्मा। इच्छा-अपेक्षा में (जीव बनता है); जीव का नाश होगा तो फिर आत्मा हो जाएगा।

प्रश्न: जब कोई उम्र में मुझसे छोटा मुझे ज्ञान देता है या तर्क-वितर्क करता है, तो मुझे अंदर से बहुत गुस्सा आता है — कैसे कंट्रोल करें? (P15-0085)

उसकी भावनाओं को और जो वो बोल रहा है उसे समझिए। उसके शरीर की उम्र मत देखिए, उसके ज्ञान को, उसकी समझ को देखिए। आपकी महानता तब है जब आप उसकी बात समझ के, अगर वो गलत है तो उसे समझा दें, और सही है तो उसे धारण कर लें। क्रोध करना कमजोरी है।

प्रश्न: ज्ञान अच्छा है या अज्ञान अच्छा है? (P15-0086)

आप जिसमें रहना चाहें वो अच्छा है। देखिए, आप खुश किसमें हैं, वो अच्छा है।

प्रश्न: मन और आत्मा एक ही होते हैं क्या? (P15-0087)

नहीं। शरीर में आत्मा है; इच्छा-अपेक्षा में वो जीवात्मा हो गया, और कुछ चाहिए तो मन आता है। मन शरीर के लिए, शरीर की जरूरत की पूर्ति के लिए काम करता है।

प्रश्न: ध्यान में कंपन, हाथ-पाँव में झटके या वाइब्रेशन होते हैं — कृपया स्पष्ट करें।

(P15-0088)

देखिए कोई विधि की है क्या? अगर विधि की है तो विधि छोड़िए, और नहीं तो उसका इलाज कराइए, और ध्यान को उचित तरीके से समझ के ध्यान करिए। अगर यह बढ़ता रहा तो आपको और तकलीफ का सामना करना पड़ेगा।

प्रश्न: नाम जप के ऊपर कुछ दो-चार वाक्य बोलिए। (P15-0089)

नाम जप आप किसी का भी कर रहे हैं, तो उस नाम के पीछे कोई है — उसका चरित्र देखिए, उसे अपनाइए, और ईमानदारी से जीवन जीते हुए, सत्कर्म करते हुए फिर उसका नाम जप करिए, तब कोई लाभ होगा।

प्रश्न: गीता में श्री कृष्ण कहते हैं आत्मा स्थिर है, कहीं आती-जाती नहीं; तो शरीर में आवागमन कौन करता है? जीवात्मा में ऐसा क्या रह जाता है जो आवागमन करता रहता है? (P15-0090)

शरीर धारण जीवात्मा करता है। इच्छा और अपेक्षा, उम्मीद, अपनी चाहत रह जाती है।

प्रश्न: आप जहाँ बैठे हैं वहाँ बहुत शांति प्रतीत हो रही है, अपार ऊर्जा है। (P15-0091)

मेरा कहना यह था कि आप नदी में कूद जाओ और कहो मैं भीगा नहीं — ये कोई बात है? साधना-स्थान बने और वहाँ भी आपको साधना करने की जरूरत पड़े, तब क्या मतलब? यहाँ रहना ही साधना है, यहाँ रहोगे तो सधोगे। आने वाले समय में यहाँ और ऊर्जा बढ़ जाएगी; मुझे ऐसा करना है कि आपको यहाँ साधना करनी ना पड़े, यहाँ रुके रहे तो सधने लगोगे।

प्रश्न: बुद्धि की परम स्थिति चैतन्यता है, उसके बाद आत्मा शुरू होती है — क्या ऐसा है? (P15-0092)

आत्मा को समझने के लिए ना बुद्धि की जरूरत है, ना कुछ की। जीव ही अपनी समझ बढ़ाता है, क्योंकि पीछे आत्मा है; और वो अपने स्व तक पहुँचने के लिए अपनी समझ बढ़ाकर अपना ही नाश करता है। अपनी समझ बढ़ा के जीव को समझ में आ जाता है कि मैं जब तक जीव रहूँगा तब तक अपूर्ण रहूँगा, तो वो अपना ही नाश करता है।

प्रश्न: फकीर का मतलब क्या है? (P15-0093)

फकीर का मतलब होता है जो अपनी लकीर को मिटा दे। लकीर मतलब भाग्य — अपने स्वयं के भाग्य को जो मिटा दे वो फकीर है। आत्मा पे आपने अपनी यादों की, मेमोरी की लकीर खींच दी है कि मैं फलूँ हूँ; इसको जो मिटा दे, वो फकीर, तो फिर वही बचा। जो भाग्य आपने जन्मों से बनाया है, उसको मिटाने में लग जाइए, धीरे-धीरे एक दिन मिट ही जाएगा। यहाँ बात ना ऊँची होती है ना नीची, यहाँ बात प्रत्यक्ष होती है।

प्रश्न: आत्म-साक्षात्कार क्या होता है? क्या ये कोई घटना घटती है? (P15-0094)

जीवन में इच्छा-अपेक्षा में जितनी भी घटनाएँ घटित हो रही हैं, उनसे अपने आप को छुड़ा लो, और स्वयं से ज्ञान प्रकट होता है; उसे आत्मज्ञान बोल दो — स्वयं का ज्ञान, स्वयं के होने का बोध।

प्रश्न: जाग्रत, स्वप्न और सुषुप्ति में क्या अंतर है? (P15-0095)

अंतर समझना ही अंतर है; नाम में अंतर है, नाम के पीछे कुछ नहीं है। स्वप्न को आप ही झुठला देते हो, और सुषुप्ति में तो कोई स्वप्न होता नहीं।

प्रश्न: चैतन्य का मतलब क्या है? (P15-0096)

अपनी परम स्थिति में हो जाना। जड़-चेतन से, चेतन से भी छूट जाना और अपने आत्म में स्थिर हो जाना, ज्ञान-स्थिति में हो जाना — उसे चेतन कहते हैं।

प्रश्न: नेगेटिव थिंकिंग से कैसे बचा जाए? (P15-0097)

काम ही ऐसा मत करो, सात्विक काम करो। संग के बाद आपको कर्म करना पड़ेगा; सत्संग में लगने के बाद अगर दुष्कर्मों वाला काम करोगे तो नहीं होगा। विद्यालय जाने से आप पास नहीं हो पाओगे, पढ़ना भी पड़ेगा, गुरु ने जो होमवर्क दिया उसका मनन करना पड़ेगा, और परीक्षा में लिखना भी पड़ेगा। देश-काल-स्थिति-परिस्थिति में उचित फैसला लेना है जिंदगी में।

प्रश्न: मीरा के अंतिम गुरु कौन थे? (P15-0098)

संत रविदास जी थे। पर गुरु भी अंतिम और शुरुआत का होता है क्या? गुरु ज्ञान का प्रतीक है, शरीर बदलता रहता है, गुरु एक ही होता है; आप रूप को क्यों पकड़ रहे हो? पहली गुरु प्रकृति और आखिरी गुरु भी प्रकृति, क्योंकि जिस शरीर के द्वारा ज्ञान मिल रहा है वो इसी प्रकृति से आया है और पाँच तत्वों में विलीन हो जाएगा। स्थूल शरीर हटा दो तो वो ज्ञान बोल पाएगा क्या? इसलिए प्रकृति को धन्यवाद देके आगे बढ़ें।

प्रश्न: बचपन से मन में बैठा दिया गया कि दो गुरु नहीं कर सकते, एक ही गुरु से नाम लिया तो उसे बदल नहीं सकते। (P15-0099)

हमने तीन गुरु बनाए और तीनों एक-एक करके छूटते गए; आखिरी गुरु ने कहा तुझे जो चाहिए मैं नहीं दे सकता, तो मैंने कहा ठीक है, जा रहा हूँ, क्योंकि मेरी खोज है। आप भूखे हो, एक ने कहा मैं भोजन करा रहा हूँ, बहुत देर इंतजार किया और भोजन नहीं कराया, तो क्या करोगे — कहीं और नहीं जाओगे, मर जाओगे? अगर इंतजार कर रहे हो कि और कहीं नहीं जाना, तो इसका मतलब आप भूखे नहीं हो, भूख का नाटक है, कुछ और चाह रहे हो। भूखा, प्यासा, रोगी आदमी ज्यादा देर रुकता नहीं।

प्रश्न: "शब्द गुरु सुरत चेला" का क्या अर्थ है? (P15-0100)

शब्द गुरु है, और जो अपने स्वयं की खोज कर रहा है वो चेला है। और आखिर में "सब में बोले एक अकेला" — चेला भी खत्म होगा, गुरु भी खत्म होगा, सत हो जाएगा।

प्रश्न: क्या जीवन में किसी से कोई आशा नहीं रखनी चाहिए? (P15-0101)

आशा रखनी है तो देने की रख लो, लेने से अच्छा।

प्रश्न: मुक्ति किस नाम से मिलेगी? (P15-0102)

बस ईमानदारी अपना कर।

प्रश्न: ब्रह्म और परब्रह्म क्या है, कौन है? (P15-0103)

ब्रह्म मतलब "मैं सुन रहा हूँ"। और पार कर गया तो परब्रह्म; परब्रह्म मिल गया तो परम ब्रह्म।

प्रश्न: ईमानदारी मुक्ति, बेईमानी बंधन — ये सब जान लेने के बावजूद भी, जब तक सत्कर्म नहीं करोगे, ताला खुलेगा नहीं? (P15-0104)

ताला तो खुल गया — ईमानदारी में आते ही। अब आप अंदर आ सकते हो, लेकिन बाहर से धीरे-धीरे अपने आप को छुड़ाने के लिए सत्कर्म करना है। इसीलिए मैं कहता हूँ पहले ईमानदारी, बाद में सत्कर्म; ये बारीकी समझनी है। अगर ईमानदारी नहीं अपनाई तो आप कितना भी सत्कर्म करो, उसका कोई मतलब नहीं, ताला ही नहीं खुला, गेट के बाहर ही दौड़ते रहोगे; क्योंकि आपकी कमाई कैसी है? ईमानदारी तो अपनानी ही है, फिर उस कमाई से सत्कर्म होना चाहिए। चार वेद, अठारह पुराण, छह शास्त्र कर लो, जब तक बेईमानी से ईमानदारी में नहीं आओगे, कुछ हो ही नहीं सकता।

प्रश्न: क्या ज्ञान पाने के बाद भी ध्यान मार्ग जरूरी है? (P15-0105)

नहीं। आत्मज्ञान हो गया तो बात ही खत्म हो गई; ध्यान क्या करना रहा, कुछ नहीं रहा।

प्रश्न: मैं और आप एक हैं, बोलने में दो हैं — ये दो-पन कैसे खत्म हो? (P15-0106)

दो-पन में एक नहीं बोल सकते, और एक हो तो दो-पन बोलने की जरूरत नहीं।

प्रश्न: साधना के बारे में कुछ बोलिए गुरु जी। (P15-0107)

ईमानदारी मुक्ति, बेईमानी बंधन; सत्कर्म करो और आगे बढ़ो, यही साधना है। अपने आप को साधो — अपने आचरण को बदलना, बुराइयों को छोड़ना, बेईमानी को छोड़ना, मान की इच्छा छोड़ना, बड़ा-छोटा बनने की इच्छा छोड़ना, योग्यता से ज्यादा पाने की उम्मीद छोड़ना, किसी को नीचा दिखाने की, जलील करने की इच्छा छोड़ना, और समझ के जीवन जीना — यही साधना है।

प्रश्न: सारे सांसारिक विषयों से अलग होकर भी संसार में कैसे रहें? (P15-0108)

बस लालच का त्याग कर दो।

प्रश्न: क्या आत्मज्ञान के लिए आपके पास आना पड़ेगा, या चैनल पर सत्संग सुनने से ही जाएगा? (P15-0109)

आपके कर्म से होगा। सत्संग के बाद उसे जीवन में उतारना पड़ेगा, कर्म में उतारना पड़ेगा, व्यावहारिक जगत में अपनाना पड़ेगा।

प्रश्न: अगर आत्मा भगवान है तो फिर शरीर क्या है? (P15-0110)

शरीर साधन है, उस साध्य तक पहुँचने के लिए।

प्रश्न: आप कहते हैं ज्ञान होने के बाद कोई ध्यान करने की जरूरत नहीं, पर शिव जी तो हमेशा ध्यान में ही रहते हैं? (P15-0111)

जाकर उनसे मिलिए, पूछिए; मुझे इतना समझ में आया, मैंने बता दिया। वो कर्म से मुक्त होके अपने आप में हैं, वो अकर्ता हैं। आप कर्म में हो, तो आँख बंद करके बैठोगे तो कुछ नहीं होगा। पहले कर्म करने में जो कर्ता का भाव आ रहा है, उस कर्तापन से छुड़ाओ, जहाँ-जहाँ फँसे हो वहाँ से छुड़ाओ, तब ना आप स्थिर बैठ पाओगे। वो ध्यान कर नहीं रहे हैं, वो अपने आप में हैं।

प्रश्न: क्या आत्मा को सुख और दुख होते हैं? (P15-0112)

वो सुख-दुख से परे है; सुख-दुख "मेरा" में होता है।

प्रश्न: अगर मुझे कोई नीचा समझता है, तो क्या मुझे उसके भले के बारे में सोचना चाहिए? (P15-0113)

आप उसके बुरे और भले के बारे में ना सोच के उससे ऊपर उठ जाइए, बात खत्म। अपने आप को सामर्थ्यवान बनाओ।

प्रश्न: क्या लोगों की उम्मीद तोड़ना भी एक मार्ग है, उनको ये दिखाने का कि उम्मीद किसी काम की नहीं? (P15-0114)

नहीं। उम्मीद मतलब जो बिना मतलब की आपने उम्मीद बना के रखी है — पहले उस उम्मीद से मुक्त कराओ: मान की उम्मीद, बड़ा-छोटा बनने की उम्मीद, किसी को नीचा दिखाने की उम्मीद, कर्म करते हुए बेईमानी की, ज्यादा पाने के चक्कर में लालच की उम्मीद — पहले ये सब छोड़िए।

प्रश्न: हमारी स्मृतियां, मतलब यादें — जो जानकारी हमने इकट्ठा की — वह कब संस्कार रूप में बाहर आती हैं? (P15-0115)

जब आपके द्वारा उस पे काम होता है। जब व्यवहारिक जगत में आप उसको आदान-प्रदान में उतारते हो, तब वो संस्कार में आती है, आचरण में — जब आप मेरा में उसका आदान-प्रदान करते हो। स्मृतियां कहां से हैं? मेरा से। यादें व्यक्तिगत आपकी नहीं हैं। आपके पास देखा जाए तो कुछ भी नहीं है; जितना भी है, बाहर से आपने लिया। तो बाहर से लिया हुआ जब व्यवहारिक जगत में आप अपनाओगे तो वही संस्कार हो जाएगा, वैसा ही आप बनते जाओगे, वैसा आपका आचरण होने लगेगा। मेरा से लेना है, मेरा में उपयोग करना है। मतलब आपके पास कुछ है नहीं — आपने बाहर से लिया है और बाहर देना है। बस यही है।

प्रश्न: गुरुदेव, देखा गया है कि बालक में भी, जिसको अभी उतना बोध नहीं है, क्रोध-लालच दिखते हैं; पशुओं में भी। कई बालक बांटने को तैयार होते हैं, कई नहीं होते। यह कहां से आता है? (P15-0116)

लालच तो पेट की बात है — जो उसका पेट भरता है, जो उसकी इच्छा पूरी करेगा। संचय का तो उसने अभी सीखा ही नहीं। और जो बांटने को तैयार नहीं होते, तो ये वो अपने संस्कार लेके आए हैं ना — पूर्व जन्म के संस्कार। तभी तो कोई राजा के यहां, कोई रंक के यहां; कोई स्वस्थ पैदा होता है, कोई कुरूप, कोई सुंदर। तरीका लेके आता है, और साथ में धन, तन और ज्ञान समझने की बुद्धि-क्षमता लेके आता है अपने कर्म से। इसलिए सबका स्वभाव अलग-अलग बन जाता है। सबको एक ही तरह से ज्ञान दिया जाता है, लेकिन सब अपने-अपने तरीके से ग्रहण करते हैं, क्योंकि सबकी बुद्धि का स्तर अलग-अलग है, क्षमता अलग-अलग है। इस समाज में तीन प्रवृत्ति वाले हैं — सात्विक, तामसी, राजसी — तो जिस प्रवृत्ति का वो है, वो उसमें चला जाता है; जैसा-तैसे को खोज लेगा। यह संसार कल्पवृक्ष की तरह है: जैसे ही आप भाव बनाए और उस पर काम करने लगे, आपको वैसे लोग मिलने लगे। तो मूल आपके कर्म से आपके संस्कार हैं। जो करते हो, वह बनते जाते हो। इसीलिए कहा गया कि मूल कर्म पर ध्यान दो — क्या करते हो और किस भाव से करते हो। कर्म के पहले, कर्म के बाद एक भाव बनता है, उससे फल का निर्णय होता है। तरीका क्या है, भाव क्या है — यह जांचते हुए आप काम करो। किसी व्यक्ति के समझ में आ जाए कि मैं गलत कर रहा हूं तो अपने आप को सुधार सकता है; सुधारने वाले उसे अनेक लोग मिल जाएंगे, जैसे बिगाड़ने वाले मिले। जिसको भी बदलना है, उसको खुद काम करना पड़ेगा; मदद करने वाले लोग मिल जाएंगे।

प्रश्न: गुरुदेव, फिर कर्तव्य क्या है? जैसे परिवार का कर्तव्य — बेटी है, पत्नी है, माता-पिता हैं — हम कर्तव्य कैसे निभाएं? (P15-0117)

कुछ जिम्मेदारियां आपको जन्म से मिल जाती हैं, कुछ जिम्मेदारियां आप लेते हो। आप उसे ईमानदारी से निभाइए ना, सीधी सी बात है। अपने कर्तव्य को पूरा करिए ईमानदार बनकर, और कर्तव्य पूरा करते हुए उन लोगों के लिए भी कुछ करिए जो समाज के लोग हैं, जिन्हें जरूरत है। आपके द्वारा जो भी कर्म इनकम के लिए हो रहे हैं, वो ईमानदारी से हों। उस ईमानदारी से जो आवक आए, उसमें परिवार का भरण-पोषण करते हुए कुछ सत्कर्म में भी खर्च करिए, जरूरतमंदों की सेवा करिए। अगर नहीं बचता है, तब इतना तो हक है आपको — हफ्ते में एक बार उपवास रख ही सकते हैं; दोनों टाइम नहीं तो एक टाइम का भोजन दान कर सकते हैं, चाहे किसी मनुष्य को चाहे किसी जीव को। बस यह आपको मुक्ति से मोक्ष तक ले जाएगा। ईमानदारी तपस्या है। करके आपने अपने आप को उलझा दिया है, अब निकलने के लिए करना पड़ेगा। तो कर्तव्य को निभाते हुए निकल जाइए। ईमानदारी मुक्ति है, बेईमानी बंधन। ईमानदारी अपना लो और सत्कर्म में अपने आप को लगा दो। आसान है ना निकलना?

प्रश्न: गुरुदेव, कर्तव्य छोटा भी हो सकता है, बड़ा भी? लोग कहते हैं मेरा कर्तव्य है कि उसके लिए इतना करना है, और फिर बहुत कोशिश करनी पड़ती है। (P15-0118)

कर्तव्य कर्तव्य होता है; ना छोटा होता है ना बड़ा। हमें ना ज्यादा करना है ना कम करना है, हमें बस जरूरत पूरी करनी है — इस शरीर की और जो हमारे साथ हैं उनकी: तन पे कपड़ा, रोटी और रहने के लिए मकान। इससे ज्यादा अगर उनकी मांग है, तो उन्हें बोल दीजिए कि मैं अपनी क्षमता अनुसार आपको दे रहा हूं; इससे ज्यादा चाहिए तो आप स्वतंत्र हैं, आप कर लीजिए, उसके जवाबदार आप होंगे, मैं नहीं। ईमानदारी से जो भी मुझे उपलब्ध होगा वह मैं लाकर दूंगा, उसमें हम भी लेंगे, आप भी लो; मैं आप लोगों के लिए बेईमानी नहीं करूंगा। और करने में अगर आप बेईमानी रखे तो मैं आपका साथ छोड़ दूंगा। त्याग ही परम सुख है — कोई भी व्यक्ति आपको गलत मार्ग पर ले जाए, उसका तुरंत त्याग करना चाहिए, जैसे राजा बलि ने शुक्राचार्य की बात नहीं मानी। जब भी आपसे कोई गलत करवाए, चाहे गुरु हो चाहे परिवार, उस व्यक्ति का, उस जगह का त्याग कर दो; यही बुद्धिमानी है। कर्तव्य, दायित्व ईमानदारी से निभाओ। जरूरी थोड़ी है कि कर्तव्य बेईमानी से निभाएं? जीने के लिए रोटी, कपड़ा, मकान चाहिए, और उतना तो आज के समय में कमा ही लेते हो। आपको सोसाइटी देखनी है, मान-प्रतिष्ठा चाहिए तो आप कमाओ, हम तो नहीं जाएंगे — सीधा बोल दो। मैं आपको रोक नहीं सकता, लेकिन इतना तो अधिकार है कि मैं नहीं करूंगा; यह अधिकार तो मेरा मुझ पर है।

प्रश्न: गुरु जी, जीवन में करना क्या है, यह कैसे पता करें? (P15-0119)

जीवन में पहले यह पता करिए कि क्या नहीं करना चाहिए। क्या नहीं करना है, जब यह पता कर लेंगे तो क्या करना है यह पता हो जाएगा।

प्रश्न: मेरे भगवान, मैं मन को शरीर रूपी रथ का घोड़ा मानता था, लेकिन आपने बताया कि घोड़ा मन नहीं है, मैं हूँ — मिला-जुला के सब कुछ आप ही हो?

(P15-0120)

यही तो भ्रम है। लोगों ने लोगों को उलझा दिया; उस सवाल को हल करने के लिए बोल दिया जो सवाल ही नहीं है, और अब आप हल करने में लगे हो। जैसे एक दिन मेरे से किसी ने पूछा कि पहले मुर्गी आई कि पहले अंडा; हमने कहा पहले मुर्गा का पता लगाओ, यह मुर्गा ही बता सकता है। हमारे सामने वह काम रख दिया गया जो कभी हो ही नहीं सकता — कि मन को रोको। अरे मन किसके लिए काम करता है? शरीर के लिए। भूख लगी, तो मन कहां जाएगा? भोजन पे। भूख लगी है यह बताएगा, और जितनी जानकारी आपके पास भोजन की है वह बताएगा, उससे ज्यादा नहीं। वो आपके लिए काम ही नहीं करता, शरीर के लिए काम करता है; तो वह आपकी बात कैसे सुनेगा? वह चाहिए मैं काम करता है — जैसे ही शरीर की जरूरत होती है, मन आ जाता है। मन है भी और नहीं भी, अगरबत्ती के धुएं की तरह: अगरबत्ती जली तो धुआं आ गया, नहीं जली तो धुआं नहीं; उसको तोड़ के टुकड़े-टुकड़े कर दो, धुआं नहीं मिलेगा। पहले आप नशा नहीं करते थे तो मन नशे पर नहीं जाता था; जब आपने शरीर को नशे का आदी बना दिया, तो मन बताता है कि शरीर की ये जरूरत है। वो यह नहीं कह रहा कि तुम पियो कि ना पियो; बस इंगित करता है। देना ना देना आपके ऊपर है। तो मन को रोकने की कोई जरूरत ही नहीं है, क्योंकि जो आपके लिए काम नहीं करता वो रुकेगा कैसे? एक तरफ तुम्हें चाहिए, एक तरफ मन को रोक रहे हो — ये लड़ाई पूरी जिंदगी चल रही है। कोई माला ले बैठ गया, कोई विधि ले बैठ गया, कोई ध्यान कर रहा है — मन को रोक रहा है, विचारों को रोक रहा है। सालों-साल गुजार दे रहे हैं लोग, और ये हो नहीं सकता।

प्रश्न: तो गुरुदेव, ये संसार की तरफ, संसार की चीजों की तरफ कौन लेके जाता है?

(P15-0121)

आपकी जरूरतें — शरीर की जरूरतें। वो मन नहीं है जो हमें संसार में ले जाता है; आपकी जरूरत लेके जाती है। आप मोबाइल-कंप्यूटर चलाते हैं, कोई फाइल खोलनी होती है, कोई वीडियो देखना होता है — तो एरो आपको उस तक लेके जाता है कि आप एरो को लेके जाते हो? आप ही ले जाते हो। वैसे ही जब शरीर की जरूरत हुई, तो जितनी जानकारी उसके पास है, उसका पता मन आपको बताने लगेगा। खाली बैठे बेचैनी होने लगी, तो पिकचर देखने की इच्छा किसकी है — मन की कि आपकी? आपकी। मन तो बस इंगित कर रहा है कि आपका पिकचर देखने का मन है, और जहां-जहां जानकारी होगा कि मिल सकता है, वह पता बताता है। मन के पीछे है कौन? आप हो। शब्द, रूप, गंध, रस और स्पर्श — जब भी इस शरीर को चाहिए, तब मन इंगित करेगा कि आपने कहां-कहां जानकारी इकट्ठा की है। और वह उतना ही बताता है जितना आपको मालूम है — या तो वर्तमान में बहिर्मुखी, जितना देख-सुन-सूंघ-चख-छू सकते हो, या जितना इंद्रियों द्वारा आपने संचित किया है, अचेतन मन में जमा है। आपको फिल्म देखने की इच्छा हुई, और उसी समय जिससे आप सालों से प्रेम करते थे वह सामने आ जाए, तो फिर फिल्म कहां गई? इच्छा आपकी है, दोष हम मन का देते हैं। मन तो आपका सहायक है: अगर मन ना बताए कि भूख लगी है, नींद आ रही है, थक गए हो — तो आप शरीर का दुरुपयोग कर लोगे, बेहोश होके गिर जाओगे। जो हमारा सबसे बड़ा मित्र है, भीड़ में भी भूख याद दिला देता है, उसी को लोगों ने आपसे सबसे बड़ा शत्रु मनवा दिया। मन का बस इतना काम है इंगित करना, जैसे एरो का काम है जाके क्लिक कर देना; अंदर क्या है, क्या खुला, यह आपको देखना है। ना उस पार जाना है ना इस पार; समझ के जीना है। आपके सामने दो ऑप्शन आते हैं — उचित और अनुचित, ईमानदारी और बेईमानी। ईमानदारी और सत्कर्म पकड़ के निकल लो। बेईमानी पकड़ी तो दुष्कर्म चालू हो गया, क्योंकि बेईमानी में किसी का शोषण ही करोगे — शारीरिक या मानसिक; तो आपका पतन हो जाएगा। क्या करने से क्या परिणाम आएगा, वो देख लो; परिणाम तो आना ही है, जो बीज बोगे उसका फल आपको ही काटना पड़ेगा। अपने आप को धोखा मत दो।

प्रश्न: गुरु जी, जैसे मैं मन के द्वारा कंप्यूटर में सही फाइल खुलवाऊं — सही जगह क्लिक हो — उसके लिए क्या साधना या क्या विधि है? (P15-0122)

सही क्लिक हो, तो बस उसके लिए सही कर्म करो — ईमानदारी और सत्कर्म। धीरे-धीरे उसके द्वारा आप निर्विकार होते जाएंगे; गंदगी निकलती जाएगी और सत्कर्म के द्वारा अच्छाई भरती जाएगी। एक तरफ से डिलीट होता जाएगा, एक तरफ से भरता जाएगा। भाई, फाइल में जो है वही खुलेगा ना — आपने जितना लोड किया है, अपलोड किया है, डाउनलोड किया है, वही सब खुलेंगे। जितने फोटो खींचे हो वही दृश्य आने वाले हैं। सुनना, देखना, सूंघना, स्वाद, स्पर्श — ये सब कैमरा ही तो हैं; हर समय हमारा कैमरा चालू है, हर समय हम जानकारी इकट्ठी कर रहे हैं। और शरीर पूरा मशीन की तरह है; कभी कुछ खराबी हो जाए तो जानकारी अंदर से निकलती ही नहीं — मुंह पे आके रह जाती है, फिर एक-दो घंटे या एक-आध दिन बाद फट से याद आ जाता है।

प्रश्न: गुरुदेव, मैं अच्छे कर्म कर रहा हूं, सत्कर्म कर रहा हूं, फिर भी कोई मेरा शोषण कर रहा है और मुझे दिखाई दे रहा है — ऐसे समय में मैं क्या करूं? (P15-0123)

मैं किसी पर हिंसा नहीं करूंगा, लेकिन जब कोई मुझ पर हिंसा करे तो मेरा कर्तव्य है अपनी आत्मरक्षा करना, और उस आत्मरक्षा में उसे सही तरीके से जवाब देना — वो हिंसा नहीं, आत्मरक्षा है। चींटी को भी अगर आप दबा दो तो पलट के काटती है; कोई उसे दोष देता है? तो अगर आपका कोई शोषण कर रहा है तो शोषण ना करने दीजिए — तुरंत उस व्यक्ति, उस जगह का त्याग करिए, या उस व्यक्ति को समझा दीजिए। और अगर शोषण करवा रहे हैं तो जरूर आप भी कहीं ना कहीं ज्यादा की उम्मीद में हैं, कुछ ना कुछ आपकी भी पूर्ति हो रही है; या कोई मजबूरी है, कोई डर है, या अबोध है, या कमजोर है, या कोई वासना है — कुछ तो बात है। क्योंकि जानवर तक शोषण नहीं करवाते: एक चूहा हाथ में पकड़ लीजिए, काटने लगता है; पक्षी पकड़िए, चोंच मारता है। यहां जितने भी जीव हैं, सब स्वतंत्र रहना चाहते हैं। शोषण तो आप तभी करवाओगे जब आपको कुछ मिलेगा।

प्रश्न: गुरु जी, मेरे साथ एक बार धोखा हुआ था — जैसे आप बता रहे थे कि गुरु लोग चेलों का शोषण करते हैं, बर्तन मंजवाते हैं। पर उस धोखे को देखकर, समझकर मेरी और गति हुई, मैं आगे बढ़ा। इसे कैसे देखें? (P15-0124)

आपने विरोध किया ना? उस धोखे से अपने आप को निकाला ना? ये ताकत सब में नहीं होती। बहुत लोग उस धोखे में पड़े हैं; बहुत कम लोग निकल पाते हैं। धोखा होने पर वही आदमी उन्नति करता है जो विरोध करता है। आप अपनी जगह सही हैं, लेकिन जहां वो बैठा है, जो उनका समूह है, उनके लिए तो आप विरोधी हुए — क्योंकि जो वो आपको बनाना चाहते थे, गुलाम, वो आप नहीं बने; उनका एक गुलाम कम हो गया। जैसे एक अच्छी टीम है, एक बुरी टीम; एक आदमी जाते-जाते बुरी टीम में पहुंच गया, और जब पता चला तो अच्छी टीम में आने का प्रयास किया — तो उसने सही किया, लेकिन बुरी टीम का विरोधी तो हो गया; वे उसे भगोड़ा ही कहेंगे। विरोध बहुत कम लोग कर पाते हैं। ज्यादातर लोग हां या ना में चले जाते हैं; दोनों में भीड़ मिल जाएगी, पहले से संगठन तैयार है — बस झुंड में जाके कहना है कि मैं भी आपके साथ हूं, और पूरे समूह की ताकत मिल जाएगी। लेकिन हां या ना से परे भी कुछ है, जहां तुम हो; वहां की यात्रा अकेले करनी पड़ेगी, और वह बहुत कम लोग कर पाते हैं। हर आदमी संगठन में जीना चाहता है, क्योंकि समूह का एक बल होता है। अकेले वही निकल सकता है जिसको ना जीना है ना मरना है।

प्रश्न: मेरे सद्गुरु जी, चिंतन पर समझाने की कृपा करें। (P15-0125)

चिंतन उसी का होता है जैसा आपके जीवन में कर्म होता है। जैसे मान लीजिए भरी बाजार में आपको किसी ने अपमानित कर दिया, आप घर पे गए — अब चिंतन कहां का होगा? उस भरी बाजार का। आपको चिंतन करना नहीं पड़ेगा, वही चिंतन होगा। जीवन में जो जरूरी होगा वही चिंतन होगा: योग्यता से ज्यादा सम्मान हुआ तो उसका चिंतन होने लगेगा; भूख लगी तो उस पर, प्यास लगी तो उस पर। तो देखिए जीवन में आपको चाहिए क्या? जाना कहीं और है, पता कहीं और का पूछ रहे हैं; हमें खुद नहीं पता कि जाना कहां है, बस यूं ही चले जा रहे हैं। पहले फैसला कर लीजिए कि मुझे सच में क्या चाहिए। जब इस पर आप पूरी तरह फैसला कर लेंगे, तब उस पर आपका चिंतन होने लगेगा।

प्रश्न: गुरुदेव, अगर किसी का आखिरी समय आ गया हो तो उसमें मुक्त होने के लिए क्या करना चाहिए? कृपया मार्गदर्शन करें। (P15-0126)

अब जो करना था वो कर लिया; आप क्या कर सकते हो? उसके कारण से वो जिस स्थिति में जाएगा — इच्छा-अपेक्षा में रहेगा तो वहां जाएगा, इच्छा-अपेक्षा से मुक्त हो गया हो तो वहां जाएगा। उसके लिए आप क्या करोगे? जो करना है वो करेगा।

प्रश्न: भाव और स्वभाव में अंतर क्या है? (P15-0127)

स्वभाव मतलब आप प्रतिक्रिया करते हैं — जैसा आपका स्वभाव रहता है। भाव मतलब कर्म के पहले भाव बनता है।

प्रश्न: गुरु जी, साधना करने के कौन-कौन से चरण हैं? (P15-0128)

साधना का मतलब सीधा होता है — अपने आप को सुधारना। पहले तो अपने आप को पता करो कि बिगड़े कहां-कहां, तभी आप अपने आप को सुधार पाओगे।

प्रश्न: गुरु जी, बुद्धि क्या है? यह कब काम करती है? (P15-0129)

जब आपको चाहिए तब ये काम करती है। आंख कब काम करती है? जब आपको कुछ देखना है। जीभ कब काम करती है? जब आपको कुछ खाना है, स्वाद लेना है।

प्रश्न: गुरु को कैसे ढूंढें, और यही हमारा गुरु है — यह कैसे समझें? (P15-0130)

आत्मिक कल्याण के लिए मार्ग पूछें। जो आपकी सफाई की बात करे, वह गुरु है — जो आपके पास है उसकी सफाई की बात करे, तो समझ लो। और आप क्या करवाने गए हो, वह देख लो; वो आपके ऊपर है। पहली बात तो आप पक्के खोजी बनो कि आप क्या खोज रहे हो — वैसे लोग आपको मिलते जाएंगे।

प्रश्न: गुरु जी, बचपन में पिता बहुत मारते थे — 10 साल की उम्र से कॉलेज तक। अब मैं 34 साल का हूं, पर पिता के सामने आने से ही बहुत डर लगता है, ढंग से बात भी नहीं कर पाता। यह डर कैसे दूर करूं? (P15-0131)

कोई बात नहीं। आप ऐसा काम करो कि पिता को लगे कि नहीं, आपने जीवन में कुछ किया। बस।

प्रश्न: मैं कौन हूँ, आने का कारण क्या है, और कहाँ जाना है? (P15-0132)

यह आप ही को पता करना है कि आप कौन हो। वर्तमान में देखिए कि आपकी स्थिति क्या है, और इस समय वर्तमान में आप कौन हो — उसे जांचिए। फिर इस 'कौन' से छूटना चाहते हो कि इसी 'कौन' में रहना चाहते हो? इस 'कौन' से छूटिए, तो आपको और 'कौन' का पता चल जाएगा।

प्रश्न: अन्य सभी जीवों में आत्मा होती है या नहीं होती है? (P15-0133)

अपने में है या नहीं, यह पता करो। अन्य जीव का अधिकार तो हमें दिया नहीं गया है; तो होती है या नहीं होती है, उससे क्या मतलब? उससे कुछ लाभ-हानि है क्या? पता कर लोगे कि कुत्ते में आत्मा है या नहीं — इससे क्या होगा? एक व्यक्ति ने खोज कर लिया कि आत्मा है, एक ने खोज किया कि नहीं है — दोनों में क्या मिलेगा? अपने में खोजो ना कि आत्मा है या नहीं। खुद का तो ठिकाना नहीं, कुत्ते में आत्मा खोज रहे!

प्रश्न: गुरु जी, मुझे आत्मज्ञान और परमात्मा से मिलने की बहुत जल्दी है, क्या करूँ?

(P15-0134)

बस उम्मीद छोड़ दो। एकदम सीधा मिलना हो जाएगा, तुरंत — अपने से भी और परमात्मा से भी। एकदम आसान रास्ता है, ये आखिरी है आध्यात्म का; अगर सीधा मिलना है तुरंत तो यही रास्ता है। उम्मीद छोड़ दो, बात खत्म, उसी जगह पे मिलना हो जाएगा। उम्मीद तो प्राणी परमात्मा से मिलने की भी करता है — वही तो छोड़ना है, तो वो आके मिल लेगा। तुम्हारी उम्मीद छूटी तो उसका आना हुआ। वो तो उसी से मिलता है जिसकी उम्मीद छूटती है — कि कौन सा ऐसा व्यक्ति है पृथ्वी पर जिसने उम्मीद ही छोड़ दी; अब वो पृथ्वी के लायक नहीं रहा, चलो अब निकल लो। क्योंकि जब तक उम्मीद है, तभी तक आप यहां बने हैं।

प्रश्न: गुरुदेव, हमारे एक मित्र ने बिल्कुल उम्मीद छोड़ दी है, पर इनका मन बहुत भागता है — पता नहीं मन भागता है कि ये स्वयं भागते हैं? (P15-0135)

आपको कैसे पता चलेगा? उन्हें ही पता चलेगा। उम्मीद छूट जाए तब तो उपलब्धि हो जाए। उम्मीद में ही तो मन आता है; उम्मीद अगर खत्म हुई तो मन भी कहां? मन काम किस पे करेगा? आप माउस को घुमाना ही बंद कर दीजिए तो एरो कहां चलेगा? कुछ उम्मीद है तभी तो मन आया। आपको लग रहा है आपकी उम्मीद खत्म हो गई, पर भटकाव तो चालू है — कुछ उम्मीद है जो मिल नहीं रहा, तभी तो भटकाव है। उम्मीद वो चाहे परमात्मा की हो, चाहे भगवान की, चाहे आत्मा की — उम्मीद उम्मीद होती है। उम्मीद है तो भटकाव है, उम्मीद खत्म तो भटकाव खत्म। उम्मीद में भटकाव, और भटकाव में एक और नई उम्मीद कि मिल जाएगा। उम्मीद अगर छूट जाए तो बात ही बन जाए: खोजते-खोजते खोजने के लिए कुछ ना रहे, खोजी बच जाए; अनुभव करते-करते अनुभव करने के लिए कुछ ना बचे, अनुभवकर्ता बचे; निर्णय करते-करते निर्णय करने के लिए कुछ ना बचे, निर्णयकर्ता बचे — तब तो उपलब्धि हो जाएगी, तुरंत। उम्मीद में ही तो हम बाहर हैं; उम्मीद ले चले तभी तो भटक रहे हैं।

प्रश्न: गुरु जी, पत्नी को दीक्षा क्यों नहीं लेनी चाहिए? (P15-0136)

देखो, पति-पत्नी जब शादी करते हैं और स्त्री के गर्भ से बच्चे का जन्म होता है, तो वो मां बनती है, एक बाप बनता है; लेकिन कौन पहले मां बनी, कौन पहले बाप बना — यह कोई बोल नहीं सकता। कहने का मतलब, पुरुष ने अगर दीक्षा ले ली तो स्त्री को दीक्षा लेने की जरूरत नहीं है, क्योंकि वह स्वयं आदिशक्ति, जगतजननी है; उसमें स्वयं ये क्षमता है कि अपने बच्चों को वो खुद पाल सकती है। वह पति के साथ है; एक बार उसने पति का साथ स्वीकार कर लिया है, तो उसे और किसी के साथ नहीं होना चाहिए — या तो फिर उस पति को छोड़ दे, जैसे मीराबाई ने छोड़ा तो संत रविदास जी को जाकर गुरु बनाया। लेकिन सीता माता, रुक्मिणी, सत्यभामा — देखिए उनका कोई गुरु था? राम जी के गुरु थे, कृष्ण के गुरु थे, सुदामा के गुरु थे, लेकिन सुदामा की पत्नी के गुरु? आपने अगर पुरुष का साथ स्वीकार किया है तो आपको जरूरत ही नहीं; आप स्वयं मां हैं। आप तो ईमानदारी से जीवन जियो, सत्कर्म करो — ऐसे ही तार सकती हो अपने आप को। इतना समझने के बाद भी अगर लग रहा है मुझे लेना चाहिए, तो लो; हम मना नहीं कर रहे हैं।

प्रश्न: गुरु जी, काम, क्रोध, मोह, लोभ — ये सब आत्मज्ञान के बाद खत्म होते हैं या फिर ब्रह्मज्ञान के बाद? (P15-0137)

आत्मज्ञान के बाद जीवन में एक बात पक्की हो जाती है — वो व्यक्ति बेईमानी नहीं कर सकता। और काम, क्रोध, मद, लोभ, मोह में से लालच तो पूरी तरह खत्म हो जाती है। अब बचा काम — तो कर्म तो उसे करना है, पर कर्ता का भाव नहीं रहेगा; जो उसे मिला है वही बांटेगा। क्रोध भी होगा, लेकिन लोगों के लिए होगा, अगर उसे करना पड़ेगा; ऐसे ही नहीं आएगा। जैसे एक मां अपने दो-तीन साल के बच्चे पर क्रोध करती है — क्या वो उस पर क्रोध कर रही है? नहीं; और ज्यादा चोट लग जाए तो वो रोती भी है। उसने सुधारने का प्रयास किया। इस तरीके से आत्मज्ञान के बाद भी व्यक्ति क्रोध करता है — जैसे राम ने समुद्र पे क्रोध किया: तीन दिन प्रार्थना की, विनती की; वो तो पहले भी ताकतवर थे, पहले दिन बाण उठा लेते, लेकिन नहीं, पहले प्रार्थना। उसके अंदर अहम भाव, मैं का भाव, अहंकार नहीं रहता, और लोभ-मोह तो रहता नहीं; यह काम और क्रोध बचा रहता है, और उसका वो उपयोग करता है। उसे कुछ भी नहीं चाहिए, फिर भी वो पहले से ज्यादा मेहनत करता है। और अगर मेरे से कोई पूछता है तो मैं कह देता हूँ — हां, काम भी है, क्रोध भी है, मद भी है, लोभ भी है, मोह भी है, सब है। कभी धोखे में मेरे पास ना आओ कि इनके अंदर ये सब नहीं है; आना तो ज्ञान के लिए आना, अपने प्रश्नों के उत्तर लो और अपना आत्मिक कल्याण करो।

प्रश्न: गुरु जी, रामायण काल वाली शिक्षा आज पुनः बता दीजिए। (P15-0138)

रामायण, रामचरितमानस — राम का चरित्र अपने जीवन में उतार लो, यही रामायण का मतलब है। गीता — गीता गीता कहिए तो 'त्यागी' निकलेगा; अपनी बुराइयों का त्याग कर देना गीता है। मेरा और कर्ता से अपने आप को मुक्त करा लो, बस यही गीता है। कर्ता का भाव तब नहीं उठेगा जब आप अनुमान लगाना छोड़ दो। और मेरा का भाव छुड़ाने के लिए 'ठीक' शब्द का प्रयोग करो, क्योंकि अच्छे में राग, बुरे में द्वेष — इसी में आप घूम रहे हो। लेनदेन में 'ठीक' शब्द का प्रयोग करो, बस बात खत्म। यह है पूरा गीता का सार।

प्रश्न: गुरुदेव भगवान, विचार जो चलते हैं वह अलग है, और जो मन बताता है वह अलग है? (P15-0139)

नहीं, ऐसा नहीं है। मन शरीर की जरूरत बताता है; विचार देश-काल-स्थिति-परिस्थिति में आता है। जैसे मान लीजिए आप ध्यान करने बैठ गए और कोई सड़ा हुआ सामान लाके इधर रख दिया, आपको पता भी नहीं — जैसे आपने सूंघा, आपका विचार उस सुगंध-दुर्गंध में गया। आप ध्यान करने बैठे हो और कोई बाजा बजा दिया, संगीत लगा दिया, तो आपका ध्यान वहां गया; लेकिन आप बहरे हो तो नहीं गया। चलिए सुनाई दिया, लेकिन वो भाषा ही नहीं आती, तो बस साउंड आ रहा है इतना पता चलेगा। कहने का मतलब है, ज्ञानेंद्रियां, कर्मेन्द्रियां अगर पूरी तरह काम कर रही हैं, तो जो भी हम बाहर से पाते हैं, वैसे विचार आने-जाने लगते हैं।

प्रश्न: अंदर का आकाश और बाहर के आकाश में क्या अंतर है? (P15-0140)

कुछ नहीं। स्पेस को, खाली जगह को आकाश तत्व बोला जाता है। ज्यादातर लोग आकाश को शून्य बोलते हैं, लेकिन शून्य का तो एक दायरा है — आपने खींच दिया, चाहे जितना छोटा, चाहे जितना बड़ा; शून्य का मतलब मुझे दायरे का पता है, तभी शून्य बोल सकते हैं। खाली जगह इतनी भी हो सकती है, इतनी भी; उसका कोई दायरा ही नहीं, अनलिमिटेड। कितना खाली है, पता नहीं — यहां तक कि शरीर में भी कितना स्पेस है, कोई नाप सकता है? किसी के बस की बात नहीं। तो उसे शून्य नहीं बोल सकते; खाली जगह को आकाश तत्व कहते हैं। ऐसे ही लोगों ने हमें भटका दिया है।

प्रश्न: जरूरत लालच कैसे बन जाती है? (P15-0141)

जरूरत लालच तब बन जाती है जब आपको योग्यता से ज्यादा चाहिए; तब वह लालच का रूप ले लेती है। बस।

प्रश्न: जीवात्मा और परमात्मा के बारे में बताइए। (P15-0142)

इसमें बताना क्या है? समझ के निकालो अपने आप को। इच्छा-अपेक्षा में हो तो जीवात्मा; इच्छा-अपेक्षा से मुक्त हो गए तो आत्मस्थिर हो गए। आत्मा परमात्मा की यात्रा करवाएगा, और इच्छा-अपेक्षा में हो तो जीवात्मा संसार की यात्रा करवाएगा। अब यात्रा कहां की करनी है, देख लो; आपके ऊपर है। इच्छा-अपेक्षा में हो तो अपने जगत में यात्रा कर रहे हो; इच्छा-अपेक्षा से मुक्त हो गए तो इस जगत में आ गए, अपने पिंड में आ गए, और पिंड में आ गए तो आत्मा परमात्मा की यात्रा करवाएगा। अभी तो आप अपने जगत में हो — इस जगत में आपने एक जगत बनाया, उस जगत में घूम रहे हो। सबकी यहां अपनी-अपनी दुनिया है; अनंत दुनिया है, यही तो है अनंत ब्रह्मांड। एक ही घर में बाप की अलग दुनिया, बेटे की अलग, पत्नी की अलग, बेटी की अलग; और सबकी दुनिया में अलग-अलग लोग हैं, अलग-अलग रोल हैं — आपके बाप की दुनिया में आप उसके बेटे हो, आपके लड़के की दुनिया में आप उसके बाप हो। सब अपनी दुनिया में उलझे हुए हैं।

प्रश्न: मन के इस जाल में से कैसे बाहर निकलना है? शरीर को जो आदतें लग गई हैं?

(P15-0143)

बस मत दो, देना बंद करो। शरीर को जरूरत है शब्द, दृश्य, गंध, रस और स्पर्श की। भोजन और सांस का आवागमन तो करना ही पड़ेगा, इसे तो नहीं रोक सकते, तो यह देना बहुत जरूरी है। बाकी दृश्य, शब्द और स्पर्श देना ना देना आपके ऊपर है। ईमानदारी से दोगे तो मुक्ति, बेईमानी से दोगे तो बंधन। बस बात खत्म, देख लो क्या करना है।

प्रश्न: महाराज जी, कहते हैं कि जिस इंद्रिय के साथ मन होता है तभी वह काम करती है — क्या यह सही है? (P15-0144)

जैसे ही आपको कुछ चाहिए, तो इंद्रियों द्वारा ही आप ग्रहण करते हो, तो मन आ जाता है। बस बात खत्म।

प्रश्न: सही निर्णय लेने में कंप्यूज होते हैं, क्या करना चाहिए गुरुदेव जी? (P15-0145)

कंप्यूज आप तब होते हैं जब आप में कहीं ना कहीं कुछ कमजोरी होती है — चाहे वह बैकग्राउंड से हो, चाहे कुछ और से। तभी आप उचित फैसला नहीं ले पाते। तो अपनी कमजोरी को दूर करें।

प्रश्न: महाराज जी, कृपा करके बताइए कि कोई आत्मज्ञानी महात्मा अपने मन को किस प्रकार देखते हैं? (P15-0146)

कुछ नहीं, उन्हें देखने की जरूरत होती नहीं। वह मन को क्यों देखें? और कोई काम नहीं है क्या? अरे, अपना काम करते हैं। मन को देखने की जरूरत आपको भी नहीं; लेकिन क्या करोगे, आपको फंसा दिया गया है। सालों-साल से आप रट रहे हो — मन को रोको, मन को रोको। इतना समझने के बाद भी सीधा-सीधा निकल नहीं पा रहे हो, सोचो जरा।

प्रश्न: गुरु जी, क्या जीवन के सभी रस खत्म होने पर शरीर का भी त्याग करना पड़ता है? हमने कई सत्संग में सुना है कि अंत में शरीर का होना भी बंधन है। (P15-0147)

ऐसा कुछ नहीं है। शरीर जब समय आएगा तो अपने आप छूट जाएगा। कितने आत्मज्ञानी महात्माओं ने इस शरीर में रह के काम किया। शरीर बंधन तभी तक है जब तक आप इच्छा-अपेक्षा में हो; इच्छा-अपेक्षा से मुक्त हो गए तो कोई बंधन नहीं। शरीर का सदुपयोग करोगे और निकल लोगे।

प्रश्न: क्या हमारा लक्ष्य निर्विचार अवस्था ही है? (P15-0148)

नहीं, निर्विकार अवस्था। निर्विचार तो कभी हुआ ही नहीं जा सकता; निर्विकार हुआ जा सकता है, राग-द्वेष से मुक्त हुआ जा सकता है। महात्मा लोग उपलब्धि के बाद भी जब भूख लगी तो भोजन मांगें — भोजन का विचार आया तभी ना मांगें? भूख का विचार आएगा तभी तो हम भोजन मांगेंगे। तो निर्विचार नहीं हुआ जा सकता; गलत मार्ग पे ना जाओ। निर्विकार हुआ जा सकता है।

प्रश्न: मन और शरीर की गति एक जैसी नहीं है, फिर भी दोनों के बीच समन्वय कैसे बनेगा? (P15-0149)

आपको क्या करना है? आपको उपयोग करना है, आगे बढ़ना है। अगर आप दिन भर गिनना चालू करो कि देखता हूं मेरी पलक कितनी बार झपकती है, या दिन में कितनी बार सांस लेते-छोड़ते हो, तो वो दिन पूरा आपका नर्क हो जाएगा। भैया, ये सब के चक्कर में ना पड़ो; जिंदगी को जियो और निकल लो, नई-नई परेशानी मत पैदा करो।

प्रश्न: मन, बुद्धि, चित्त, अहंकार — ये अंतःकरण में, शरीर में कहाँ रहते हैं? कोई कहता है यह शरीर ही मन है — क्या यह सही है? (P15-0150)

नहीं। जैसे मान की इच्छा है, कुछ बनना है, तो अहम भाव आता है; मान की इच्छा नहीं है, कुछ बनना नहीं, तो अहम भाव आता नहीं। यह आता है और जाता है; कहाँ से आता है, कहाँ जाता है, किसी को पता नहीं। जैसे आप बैठे हो, किसी ने आपके चिकोटी काटी, तो दर्द कहाँ से आया? अभी तक तो नहीं था। और छोड़ दिया, तो कहाँ गया? जब तक पकड़े हो, है। अगर आप बोलोगे कि आपका दर्द मुझे दिखाओ, तो मैं कैसे दिखाऊँ? कुछ चीजें देखी नहीं जा सकतीं, उनका एहसास किया जा सकता है — जैसे दर्द महसूस किया जा सकता है, देखा-दिखाया नहीं जा सकता। वो कहाँ से आता है, कहाँ जाता है, पता नहीं। यह सब के चक्कर में ना पड़ो।

प्रश्न: गुरु जी, क्या अध्यात्म और धर्म दरिद्र और गरीब रहना सिखाता है?

(P15-0151)

नहीं, संपन्न रहना। संपन्न लोग आध्यात्म की तरफ बढ़ पाते हैं; दरिद्र तो बस संसाधनों में, लालच में ही भटकता रहता है। संपन्न व्यक्ति आध्यात्म की खोज में निकलता है। तीन तरह के साधक अपने घर से निकलते हैं — एक स्वभाव में, एक कुभाव में, एक अभाव में। स्वभाव में जो निकलता है वह खोजी होता है, आंतरिक रूप से संपन्न होके निकलता है। कुभाव में जो निकलता है वह झगड़ा-वगड़ा करके निकलता है, और अभाव में जो निकलता है वह किसी कमी की वजह से निकलता है। अभाव वाले पूजा-पाठ, यज्ञ-हवन में लग जाते हैं, और कुभाव वाले तंत्र विद्या की तरफ चले जाते हैं — ये दो तो जगत में भटकते रहते हैं। स्वभाव वाले अपने आप को निर्विकार कराते हैं, और वही अपने आप तक पहुँचते हैं। बस यही यात्रा है। आप देखो आप किस में निकले हो।

प्रश्न: गुरु जी, मन अपने और आत्मा के लिए कब और कैसे काम करता है?

(P15-0152)

बस चाहिए में काम करता है। आपको कब चाहिए? जब भूख लगेगी तब भोजन चाहिए; भूख नहीं लगी तो भोजन नहीं चाहिए। हो सकता है आपने स्वाद की इच्छा बना ली — स्वाद की इच्छा आपकी इच्छा है, लेकिन वह इंद्रियों द्वारा लेते हो; तो जब इंद्रियों से स्वाद ग्रहण करना चाहते हो, तो वही मन जाने लगता है। तो मन शरीर के लिए काम करता है; वो जब आपकी जरूरत होती है तब बताता है। (और मन और चित्त एक नहीं, अलग-अलग हैं।)

प्रश्न: गुरु जी, क्या समाज के कल्याण में आत्मा का कल्याण छिपा है, या पहले आत्म-कल्याण आता है, फिर बाद में समाज, राष्ट्र और विश्व कल्याण? (P15-0153)

सर्वप्रथम पहले आप आत्म-कल्याण करेंगे, तभी आप समाज-कल्याण कर पाएंगे। जैसे आपको किसी को शिक्षा देनी है, तो जब आप शिक्षित होंगे तभी ना शिक्षा दे पाएंगे; और शिक्षित होने के लिए आपको कई वर्ष लगाने पड़ेंगे। वैसे ही जब आप अपना कल्याण कर पाएंगे, तभी आप किसी के कल्याण के लायक बन सकते हैं। जब आपका ही कल्याण आप नहीं कर पाएंगे, तो दूसरों के लिए कैसे समझेंगे कि ये करने से इसका कल्याण होगा?

प्रश्न: गुरुदेव, चिंतन और चिंता दोनों में क्या भेद है? (P15-0154)

चिंतन मतलब आप अपनी समझ को बढ़ाना चाहते हैं। चिंता मतलब बाहर कोई दुर्घटना-घटना हो गई है, उसकी चिंता है, आपको दुख है।

प्रश्न: क्रोध को कैसे शांत करें, गुरु जी? (P15-0155)

अपने तरीके से करवाने की इच्छा का त्याग कर दो, तो क्रोध नहीं आएगा। क्रोध तब आता है जब हमारे तरीके से सामने वाला बर्ताव नहीं करता। तो अपने तरीके से बर्ताव कराने की इच्छा का त्याग कर दें; जो जैसा है उसका उपयोग करके आगे बढ़ें।

प्रश्न: बाबा, समाधि अवस्था का क्या अनुभव है? (P15-0156)

अनुभव से परे है; वहां कोई अनुभव बोला नहीं जा सकता। अगर एक मां बच्चे को जन्म दे रही है, तो उससे पूछो कि इसका क्या अनुभव है — तो बोलेंगी दर्द हुआ, बहुत पीड़ा थी; लेकिन अब दर्द का क्या अनुभव आपको बताए, किन शब्दों में बताए? बहुत-बहुत बोल सकती है, अब कितना बहुत बोले? दर्द का अनुभव करना है तो खुद से गुजरना पड़ेगा; और कैसे बताएं।

प्रश्न: गुरु जी, क्या मरते टाइम भगवान का नाम लेने से मुक्ति मिलती है, अगला जन्म नहीं होता — जैसा शास्त्रों में बताया है कि "अंत मति सो गति"? (P15-0157)

ऐसा नहीं है। ये चालाकी छोड़ो। सत्कर्म करो और ईमानदारी से जीवन जियो, और आगे बढ़ो।

प्रश्न: गुरु जी, इस मन की कुछ आदतें होती हैं; इसको अच्छी आदतें कैसे लगाएं? और ये आदतें क्या पूर्व जन्म के संस्कार से हैं? (P15-0158)

आदतें आपकी हैं कि मन की? आप और मन एक हो कि अलग-अलग? आप मन हो कि मन आप हो? पहले यह पक्का करो, देख लो — फिर पता चलेगा आदतें किसकी हैं।

प्रश्न: गुरु जी, अध्यात्म छोड़ने की बात क्यों करता है? अपनी रक्षा के लिए मरने की बात क्यों नहीं करता? (P15-0159)

अध्यात्म को आप अलग तरीके से समझते हो। अध्यात्म हमेशा यही सिखाता है — आत्मरक्षा, स्वाभिमान की रक्षा, अच्छा करना, और बुराइयों को छोड़ देना, बेईमानी को छोड़ देना। यह है अध्यात्म।

प्रश्न: गुरु जी, क्या डर से मुक्त होने के लिए जिस काम से डर लगता है, वो काम बार-बार करना चाहिए? (P15-0160)

नहीं, ऐसा नहीं है। उचित हो, जीवन के लिए हो, तब करो — आपको, समाज को, परिवार को लाभ हो तो करो। ऐसा नहीं कि सांप से डर है तो आप सांप पकड़ने लगे; यह बेवकूफी है। उसके पास जाने की क्या जरूरत है? वो जहरीला है, काट लेगा भाई; उससे दूर ही रहो।

प्रश्न: गुरु जी, आत्मा का मिलना और परमात्मा का मिलना एक ही बात है या अलग-अलग? दोनों में अंतर क्या है? (P15-0161)

अंतर समझना ही अंतर है। आत्मा का मिलना — स्वयं का मिलना; परमात्मा का मिलना — उस परम सत्ता से मिल लेना। बस।

प्रश्न: गुरु जी, किसी के साथ अच्छा करो तो उसका फल उल्टा क्यों मिल रहा है वर्तमान में? (P15-0162)

ऐसा कुछ नहीं है; जैसा करोगे, परिणाम वैसा ही आएगा। कहीं ना कहीं गड़बड़ी है — जैसे लाल बल्ब लगा दिया और आपने काला चश्मा लगा लिया, तो कुछ अलग ही दिखेगा ना; खुली आंख से देखो। कहीं ना कहीं अच्छा करने में गड़बड़ कर रहे हो, कहीं ना कहीं भाव गंदा है आपका। कुछ तो है, देख लो।

प्रश्न: गुरु जी, मद और अभिमान में क्या अंतर है? (P15-0163)

मद मतलब मैं किसी को दबाना चाहता हूँ; मद जैसे ही होता है तो अहंकार बाहर आता है। और अभिमान मतलब मैं तुमसे ज्यादा हूँ।

प्रश्न: काम, क्रोध, मद, मोह, लोभ की व्याख्या क्या है? (P15-0164)

काम मतलब कोई भी कर्म — कोई भी काम करके अगर आपको परिणाम अपने तरीके से चाहिए, तब आप उसमें फंस जाते हो। कोई भी काम करो, परिणाम का इंतजार करो। क्रोध तब आता है जब आप किसी से कुछ करवाते हो और आपके तरीके से नहीं होता; अपने तरीके से करवाने का भाव छोड़ो — सबकी स्थिति-परिस्थिति अलग होती है, सामने वाला क्यों नहीं कर रहा, उसकी क्या स्थिति-परिस्थिति है, वो जांचिए। मद तब होता है जब आप कुछ बनना चाहते हो, किसी को नीचा दिखाना चाहते हो; तो किसी को ऊपर उठाने का भाव रखो, नीचा दिखाने का नहीं — मानवता यही कहती है। लोभ तब होता है जब आप अपने से ज्यादा किसी के पास कुछ देखते हो कि मेरे पास भी हो; देख लो आपकी सामर्थ्य है या नहीं, योग्यता है या नहीं, जरूरत है या नहीं — तो आपका लोभ हट जाएगा। मोह उससे होता है जिससे आपको अपने तरीके से मिलता है; तो अपने तरीके का त्याग करें, और लेने का भाव छोड़ के देने का भाव लें। तो काम, क्रोध, मद, लोभ, मोह से आप अपने आप को निकाल पाएंगे।

प्रश्न: गुरु जी, क्या मंदिर में पैसा चढ़ाने पर पाप तो नहीं लगता? (P15-0165)

मंदिर में पैसा नहीं चढ़ाओगे, तो वहां की व्यवस्थाएं कैसे चलेंगी? या तो जाओ मत। अगर उस व्यवस्था का उपयोग कर रहे हो और पैसा नहीं चढ़ाओगे, तो वहां की लाइट, खर्च, आदमी लगे हैं — कहां से चलेगा? रोज आदमी सुबह-शाम वहां धुलाई कर रहा है, पोछा मार रहा है, उसके भी तो परिवार हैं। कहना तो बड़ा आसान है। या तो उस व्यवस्था का उपयोग मत करिए; उपयोग करिए तो उसका दीजिए — ना पाप के लिए दीजिए, ना पुण्य के लिए; इतना तो दीजिए कि वहां की व्यवस्था चले।

प्रश्न: क्या आत्म-साक्षात्कार होने पर खुद में प्रकाश ही प्रकाश दिखाई देता है, गुरु जी? (P15-0166)

आत्मज्ञान होने पर ऐसा कुछ नहीं होता जैसा आप लोग समझते हो; कुछ अलग ही होता है। इसके बारे में किताबों में भी नहीं लिख सकते, क्योंकि आत्म में जब आप पहुंच जाते हो तो वहां से शब्द ही नहीं उठते — तो लिखेगा कैसे? आप लोग जितना समझ रहे हो, जितना लिखा गया है, वैसा कुछ भी नहीं होता।

प्रश्न: गुरु जी, यह तो समझ में आ गया कि बेईमानी बंधन है, और इसी शरीर में बेईमानी का कर्मफल भोगना पड़ता है। तो अगर 40 वर्ष तक बेईमानी की है, तो क्या फल भोगने में भी उतना ही समय लगेगा? (P15-0167)

ऐसा नहीं है। जैसे मान लीजिए आपने बिल्डिंग बनाई और बहुत ऊंची बना ली; अब उसको गिराने में ज्यादा समय नहीं लगेगा। हर जगह बम फिट कर दो, एक ही बार दबाओ, गया; या बुलडोजर मंगा लो, गिरा दो। गिराने में समय नहीं लगेगा — आप सच में गिराने के लिए तैयार हैं क्या? आप तैयार हो जाएं, तो बहुत जल्दी गिरेगा; आप में उतनी पावर है, उतनी ऊर्जा है।

प्रश्न: इच्छा का त्याग करना है — यह भी तो एक इच्छा ही है? (P15-0168)

कौन सी इच्छा का त्याग करना है? जो बिना मतलब की इच्छा बनाए रखे हो — योग्यता से ज्यादा पाने की इच्छा; इसका त्याग करना है। यह इच्छा में नहीं आता; वो बनाई हुई इच्छा है। आप नशा कर रहे हो — नशा छोड़ना कोई इच्छा नहीं है, क्योंकि नशे की इच्छा आपने बनाई थी; अब छोड़ रहे हो, मूल में आ रहे हो, तो यह इच्छा नहीं है। और अगर लगे कि नहीं, ये इच्छा नहीं छोड़नी चाहिए, तो पकड़ के बैठो, उसी में पड़े रहो।

प्रश्न: गुरु जी, नाम जप कैसे बढ़ाएं? (P15-0169)

ईमानदारी और सत्कर्म अपनाने के बाद ही नाम जप करना। अगर ईमानदारी-सत्कर्म नहीं रहा, तो नाम जप से अपना पतन कर लो; पहले अपना ध्यान रखना।

प्रश्न: गुरु जी, अवचेतन मन में कैसे प्रवेश करें? (P15-0170)

जब बहिर्मुखी से मिलना बंद हो जाता है, तो अचेतन मन में अपनी जरूरत के लिए आप अपने आप चले जाते हो। करना नहीं पड़ता; वो अपने आप चलता रहता है।

प्रश्न: ईश्वर क्या है? हम कौन हैं? (P15-0171)

'क्या है' से परे है। 'क्या है' से अपने आप को छुड़ा लो, आत्मस्थिर हो जाओ; उसके बाद ईश्वर बता देगा कि मैं क्या हूँ। जैसे कोई पूछे कि शेर क्या है, तो शेर के सामने खड़े हो जाओ, शेर बता देगा कि मैं क्या हूँ।

प्रश्न: भगवान, जब सत्संग सुनते हैं तब अपने आप में रहते हैं; जैसे ही सुनना बंद करते हैं, शरीर भाव में आ जाते हैं। क्या करें कि सदैव अपने आप में बने रहें? और एक तरफ खुशी, फिर रोना क्यों आता है? (P15-0172)

इस सत्संग को व्यवहारिक जगत में, जब आप जी रही हैं, तब उतारिए। लोगों से बातचीत करते, उठते-बैठते, खाते-पीते, नाचते-गाते — हर वक्त इस सत्संग को अपने जीवन में उतारो, व्यवहारिकता में लाओ, बोलचाल में लाओ।

प्रश्न: मेरे भगवान, महाभारत में भी बोले हैं कि किसी तत्त्वदर्शी संत को ढूँढो। तत्त्वदर्शी संत का मतलब क्या है? (P15-0173)

जिसे बंधन का भी पता है, मुक्ति का भी पता है; जो बंधनों से मुक्त हो गया हो, और वह बंधन देख लिया हो कि बंधन क्या थे, उनसे कैसे छुटकारा पाया जा सकता है, और अपने आप को छुड़ा लिया हो। पांच तत्व हैं, छठवां तत्व आत्म तत्व को बोला गया है; उसे आत्मज्ञान भी हो जाता है, तत्व का भी ज्ञान हो जाता है, तो इस रूप से आप कैसे मुक्त हो जाओ, उसके लिए उसके पास मार्ग मिल जाता है। ऐसे लोगों से मिलने से आत्मिक कल्याण होगा। वो बताते-बताते आपको वहां तक लेके जाएंगा कि कुछ नहीं है — इस संसार के बारे में, इस पिंड के बारे में, जहां-जहां से आप रस ले रहे हो, इतना बता देगा कि आपको समझ में आ गया कि कुछ है ही नहीं, ये तो एक भ्रम है। जब यह बात आप अपनी समझ से समझ लो, तब छूट जाओगे, आत्म में स्थिर हो जाओगे, आत्मज्ञान हो जाएगा। पांच तत्व से शरीर बना है; पिंड में फंसे और आपने इससे अपने आप को छुड़ा लिया, तो तत्व से अपने आप को छुड़ा लिया — तो आत्मज्ञान हुआ तो तत्वज्ञान भी हो गया।

प्रश्न: गुरु जी, अगला जन्म किस आधार पर होता है — प्रवृत्ति, भाव, इच्छा-अपेक्षा, या कोई और कारण है? (P15-0174)

इच्छा-अपेक्षा। अब जैसे मान लीजिए यह आपको क्या दिख रहा है? कपड़ा। क्या इसके अंदर धागा नहीं? धागे से कपड़ा बना; धागे में रुई है; रुई के पीछे फूल है, फूल के पीछे पेड़, पेड़ के पीछे बीज। मतलब इस कपड़े में बीज भी है, लेकिन दिख रहा है क्या? जिसको पूरी जानकारी ना हो वो बोलेगा तुम पागल हो, ये बस कपड़ा है। इसे कहते हैं तत्वज्ञान — इस कपड़े में सब है। और आखिरी में कुछ नहीं; बीज के पीछे तुम जा नहीं सकते — बीज के बाद फिर वही पेड़, पेड़ के बाद फिर वही बीज; घूमते रहोगे। इसीलिए मैं कहता हूँ घूमो मत, 'कुछ नहीं' में आ जाओ, निकल लो। तत्वज्ञान आखिरी में ले जाके बता देता है कि कुछ नहीं है। मानव को बस परिवर्तन तक का पता है: किसी चीज को जला दो तो राख बनेगी, लेकिन राख भी तो रूप में है; राख के बाद आप क्या जाओगे, उसका क्या कर सकते हो? राख को बदलने की क्षमता प्रकृति को है, आपको नहीं। इसलिए एक काम करो — बाहर जाना बंद करो, अपने में जाओ। बाहर बस समझो और निकल लो; अपनी समझ विकसित करने के लिए बाहर से कुछ लेनदेन करना है, बस। बाहर ज्यादा मत उलझो, क्योंकि एक बाल कहां से आता है, दांत कहां से आता है, इसका भी पता नहीं लगा पाओगे। इसलिए बाहर का सदुपयोग करो और निकल लो — गन्ना खा लो, चना चबा लो; दांत कहां से आया, वो मत देखो।

प्रश्न: गुरु जी, सिद्धियां कब मिलती हैं, और ये आत्मज्ञान में सहायक हैं या बंधन? (P15-0175)

बंधन हैं। सिद्धियों के चक्कर में मत पड़ो।

प्रश्न: गुरु जी, क्या शिवालय में रोज जल छोड़ने से सत्कर्म बनता है? (P15-0176)

भूखे को भोजन, प्यासे को पानी — ईमानदारी और सत्कर्म रखो; फिर जहां भी जल छोड़ना है, छोड़ो।

प्रश्न: महाराज जी, संपन्न होने के लिए तो सारी दुनिया दौड़ लगा रही है। जो ईमानदारी से चलता है, उसमें उतनी प्रतिद्वंद्विता की भूख नहीं रह जाती; तब क्या उसकी गरीबी आत्मज्ञान में बाधा बन जाएगी? (P15-0177)

नहीं, ऐसा कुछ नहीं है। गरीबी आप किसे समझते हैं? गरीब तो वो होता है जो अमीर बनने के लिए बेईमानी का उपयोग कर रहा है, अनेक लोगों का शोषण कर रहा है — सबसे ज्यादा गरीब तो वो है। वो गरीब है तभी तो शोषण कर रहा है; भूखा है, और इतना भूखा है कि राक्षस बन गया है। तो गरीब वो है जिसे आप अमीर समझ रहे हो, अगर वो बेईमानी से जी रहा है। संपन्न तो वो है जो ईमानदारी से जीवन जी रहा है। संपन्नता की परिभाषा ही आप लोगों ने बदल दी। संपन्न कौन है? ईमानदार। ईमानदार अपने आप में है, बेईमान बाहर है।

प्रश्न: रोज चिड़िया को दाना देने का क्या मतलब है? क्या यह सत्कर्म में आएगा?

(P15-0178)

हां, अगर आप किसी भूखे को भोजन करा रहे हैं तो सत्कर्म में ही आता है। भूखे को भोजन, प्यासे को पानी, जरूरतमंद की सेवा — यह सत्कर्म में ही आता है।

प्रश्न: गुरु जी, सनातन धर्म कहां से शुरू होता है, और कहां पे उसका एंड होता है?

(P15-0179)

उसका ना आदि है ना अंत। सनातन का मतलब — जिसका नाश नहीं होता; वो है सत। यही है सनातन का मतलब।

प्रश्न: मेरे भगवान, आप बोलते हो "निकल लो" — निकलना कहां से है? जाना तो यहीं है। (P15-0180)

निकल लो मतलब जहां उलझे हुए हो, वहां से निकल लो, बस। और अगर नहीं उलझे हुए हो तो बात ही खत्म — तब निकलने की क्या जरूरत है? तो आप निकले हुए हो। (और कोई कहे कि सृष्टि हमारी इच्छा से रची गई है, हम इसे चला सकते हैं — तो चलाओ; हम तो निकल रहे हैं, मुझे अब नहीं चलाना है।)

प्रश्न: गुरुदेव, इतने असंख्य प्रश्न कहां से आते हैं — मन के द्वारा कि अपने आप?

(P15-0181)

बाहर से आपने लिया है। आपका एक भी प्रश्न नहीं है, आपके पास तो प्रश्न ही नहीं; लेकिन अभी आपके बन गए, क्योंकि इस प्रश्न को आपने अपना मान लिया — अब इसके उत्तर चाहिए। प्रश्न कहां से लिया? बाहर से; उत्तर कहां से चाहिए? बाहर से। प्रश्न भी इसी संसार से आए, उत्तर भी यहीं से आएंगे, क्योंकि आपने संसार से ही पंगे लिए। इसलिए आखिरी में प्रश्न भी नहीं रहेंगे, उत्तर भी नहीं रहेंगे, आप रहेंगे — वही है समाधि की स्थिति। एक समय ऐसा होगा कि ना आपके पास प्रश्न होंगे ना उत्तर; वही होती है समाधि।

प्रश्न: गुरु जी, बहुत कोशिश करने के बाद भी ध्यान लगाता हूं तो आंखें बंद करने पर अंधेरा ही दिखता है। ध्यान की सही विधि बताइए, कैसे ध्यान सही होगा?

(P15-0182)

आंख बंद करने के बाद तो अंधेरा ही लगेगा ना, उजाला तो आएगा नहीं — किसी का भी आंख बंद करने पे अंधेरा ही आएगा। कहने का मतलब है ध्यान में ध्यान करो — कर्म में इतना ध्यान रखो कि कोई गलती ना हो जाए; इसी को कहते हैं ध्यान। ध्यान और समाधि — इनका मतलब बिल्कुल सरल है, एकदम साफ-सुथरा, लेकिन घुमा दिया गया, इसका व्यापार बना दिया गया। समाधि माने समबुद्धि — समता आपकी बुद्धि में बैठ गई। ध्यान माने आपसे कहीं गलती ना हो, यही ध्यान है।

प्रश्न: ध्यान की ऊर्जा को कैसे बढ़ाएं? (P15-0183)

आखिर में ध्यान से भी अपने आप को छुड़ा लेना है, क्योंकि जब तक ध्यान रहा, तब तक आप बाहर ही रहोगे। जब तक कुछ चाहिए, तभी तक आप चाहिए में, उन वस्तुओं में ध्यान में जा रहे हो। ध्यान से भी छुटकारा चाहिए; सब छूट जाएगा, बचोगे तुम ही। कुछ भी चाहिए तो बाहर लगे रहोगे; एक समय ऐसा आएगा कि ध्यान भी छूट जाएगा।

प्रश्न: गुरु जी, आत्म ध्यान और परम ध्यान में क्या अंतर है? (P15-0184)

आत्म ध्यान मतलब आप अपनी तरफ बढ़ना चाहते हैं, बाहर से अपने आप को छुड़ाना चाहते हैं। और परम ध्यान अपने आप होता है, उसमें आप कुछ भी नहीं कर सकते; पहले आत्मज्ञान तक तो पहुंचो। जैसे मान लीजिए कोई विवाह कर ले, तो वो गर्भधारण के लिए प्रयास करता है — तब ध्यान बाहर रहता है कि मेरा गर्भधारण हो जाए; और जब गर्भधारण हो जाता है, तब उसका ध्यान अंदर ही गर्भ के प्रति लगा रहता है, बाहर नहीं जाता, और एक समय ऐसा आता है कि मां बन जाती है। वैसे ही आत्मज्ञान के बाद परम ध्यान घटित होता है, और एक समय ऐसा आता है कि परमात्मा से उसका मिलना हो जाता है। गर्भधारण तक प्रयास है; मां-बाप बनने का कोई प्रयास करता है? उसके बाद सिर्फ इंतजार है। आत्मज्ञान तक प्रयास करना है; आत्मज्ञान के बाद आप प्रयास से मुक्त हो गए — उसके बाद सिर्फ इंतजार।

प्रश्न: गुरु जी, रोज मुझे एक घंटा बैठना है; उस समय क्या मैं कुछ ना करूं, सिर्फ अपने आप को देखूं? (P15-0185)

नहीं, देखो ही मत, कुछ करो ही मत, क्योंकि देखना भी तो एक काम है। बस कुछ ना करने में बैठो।

प्रश्न: गुरु जी, ईश्वर को पुकारने के लिए, आराधना के लिए सबसे अच्छा नाम कौन सा लेना चाहिए? (P15-0186)

ईमानदारी और सत्कर्म करते हुए जियो और आगे बढ़ो। और नाम लेना है तो बस इतना लो — "कुछ नहीं चाहिए"। अगर ये नाम जपना चालू किया तो ये आपसे सब छुड़वा देगा। ज्यादा नहीं, दो महीना अपने घर में लगातार जप लो — कोई आए, चाहे बात करे, कुछ नहीं चाहिए, कुछ नहीं चाहिए; कुछ दिन में लोग समझ लेंगे पागल हो गया, बात करना भी बंद कर देंगे। मधुर आवाज में, जहां भी रहिए — कुछ नहीं चाहिए। करके देखिए; फिर लोगों का बर्ताव देखिए, और फिर अपनी स्थिति देखिए।

प्रश्न: गुरुदेव, अब तो कमर अकड़ गई, बैठा भी नहीं जाएगा — यह शरीर बोल रहा है कि मन? और जैसे अभी इतने प्रश्न चल रहे थे, मुझे बाथरूम आ रही थी, मन बोल रहा था कि बाथरूम करके आओ, पर अंदर से आवाज आई कि नहीं, प्रश्नोत्तर चल रहे हैं, ये जरूरी है। (P15-0187)

यही तो बात है। कुछ देर पहले शरीर नहीं बोल रहा था, अब बोल रहा है — दर्द हो रहा है, वही शरीर की जरूरत है; मन की कोई इच्छा नहीं है। इस शरीर का आपको उपयोग करना है, इसलिए शरीर को आराम देना भी जरूरी है। और बाथरूम वाली बात में आपने फैसला लिया ना? आपको पता है कि थोड़ी देर रोक सकता हूं; मन का काम है बताना, सो उसने शरीर की जरूरत बताई, लेकिन आपने अपनी जरूरत ज्यादा रख दी कि ये रोज-रोज नहीं मिलेगा, आज ले लो। मन का काम है आपके शरीर की जरूरत को इंगित करना — अब दो जगह क्लिक कर रहा है, बाथरूम पे भी और 'इसे आराम दो' पे भी; कुछ देर और बैठोगे तो तीसरी जगह क्लिक करने लगेगा। वो आपका सहायक है। अगर वो काम ना करे, तो आपका पूरा शरीर फेल हो जाएगा; जिसको नहीं बताता, वे कोमा में चले जाते हैं, उन्हें पता नहीं चलता। अगर मन रुक जाए तो आपका ब्रेन डैमेज हो जाए; फिर आपकी जरूरत कौन बताएगा? इसलिए भैया, मन को मत रोको, मत परेशान करो।

प्रश्न: गुरु जी, दृष्टा और दृश्य को समझाइए। (P15-0188)

दृश्य हमारे सामने हैं और दृष्टा हम हैं। बस इच्छा-अपेक्षा नहीं है तो हम उसमें फंसे हुए नहीं, उससे अलग हैं; और इच्छा-अपेक्षा है तो हम उसमें लिप्त हैं। बस बात खत्म। (और बैठकर ध्यान कैसे करें? कर्म में इतना ध्यान रखो कि कोई गलती ना हो जाए; और बैठकर ध्यान करना है, तो बस बैठ जाओ, कुछ ना करो।)

प्रश्न: इस प्रश्न का उत्तर मैं आपसे चाहता हूँ — मैं इस जीवन को और उचित तरीके से कैसे जीऊँ? (P15-0189)

इसका उत्तर ही नहीं है। इसका उत्तर जीना है। आपको ही खोजना है, खुद सीखना है, आपको उसमें जीना है। हां, कोई पूछे कि मैं और उचित तरीके से काम करना चाहता हूँ, तो व्यक्ति पूछेगा कौन सा काम कर रहे हो, किस फील्ड में; उस फील्ड की उसे जानकारी होगी तो ज्ञान देगा, नहीं तो कहेगा वहां चले जाओ। लेकिन यह प्रश्न है — जीवित व्यक्ति जब तक है, यह प्रश्न रहेगा। ऐसा लगता है कि प्रश्न खत्म हो गए; तुम स्वयं प्रश्न हो, जो स्वयं प्रश्न है उसका उत्तर कहां से मिलेगा? इसमें जीना पड़ेगा, खोजना पड़ेगा। जब तक इस पिंड में हो, इस पिंड के लिए कुछ भी कर रहे हो, तब तक यह प्रश्न बना रहेगा और इसका उत्तर भी नहीं — यह ध्यान रखना। माथा मत फोड़ो, जियो। आप जिस यात्रा को कर रहे हो, उस यात्रा को और उचित तरीके से कैसे करूं, उसके लिए बात करो। प्रश्न तो तब खत्म हों जब करने के लिए तुम्हारे पास कुछ भी ना हो। आप जिस भी फील्ड में हो, जिस मार्ग पे हो, मैं और उचित तरीके से कैसे आगे बढ़ूं — उसके लिए बातचीत करो, उसी में हल निकलेगा।

प्रश्न: ना चाहते हुए भी विचार में गड़बड़ होती रहती है। जो चीज आज तक सीखी है उसे छोड़ना चाहते हैं, पर बार-बार आदत से वही आ जाती है — जैसे स्वास पर नाम का सुमिरन मिला था, अब ध्यान में बैठता हूँ तो वह अपने आप चालू हो जाता है। यह छूटेगा कैसे? (P15-0190)

जो चीज विचार में गड़बड़ हो रही है, तुम गड़बड़ करना बंद कर दो। बाहर से ही तो फंसे हो — अंदर से फंसे हो क्या? बाहर के कर्म करके ही फंसे हो; अंदर तो कुछ है ही नहीं। स्वास तो ऑटोमेटिक चल रही है, तो क्या जरूरत थी तुम्हें स्वास पे नाम लेने की? अब छोड़ दो। परेशान क्यों हो? छोड़ना क्यों चाहते हो?

प्रश्न: जहां भी सत्संग में गए, यही बताया गया कि मन तुमको चला रहा है। क्या सच में मन हमें चलाता है? (P15-0191)

सारा मन का नहीं, तुम्हारा खेल है — अपने आप का ही खेल है। आपसे मन है, तो मन कैसे आपको चलाएगा? जो है भी और नहीं भी है, उससे क्या तकलीफ? वो तो आपका सहायक है। आपको बाथरूम लगी तो मन तुरंत बताता है, जब तक निकाल नहीं दोगे तब तक बताता रहेगा। उसका काम है आपको सचेत करना — भूख लगी, भोजन करो; करना ना करना तुम्हारे ऊपर है, परिणाम भोगोगे तुम। और गहराई में जाओगे तो वह आपके लिए काम ही नहीं करता, वह शरीर के लिए काम करता है — जैसे पलक आंख की रखवाली करती है, आपसे कोई मतलब नहीं। पहले आप नशा नहीं करते थे तो मन कभी नशे पे नहीं गया; जब आपने शरीर को नशा दिया और बाद में देना बंद किया तो मन नशे पे गया, क्योंकि वह शरीर को चाहिए। मन यह नहीं कह रहा कि तुम पियो; तुमने शरीर को पिला दिया, आदत डाली, वह बताता है कि शरीर को यह जरूरत है। इसलिए आपके छोड़ने के बाद भी मन वहां जाता है, क्योंकि शरीर चेतन है।

प्रश्न: तो फिर यह चैतन्य क्यों होना चाहता है? (P15-0192)

चैतन्य तुम होना चाहते हो, मन नहीं। तुम अपनी मूल स्थिति में आना चाहते हो। आत्मा परमात्मा से मिलने के लिए व्याकुल है, और शरीर को चाहिए रस, क्योंकि वह रस का आदी है। तुमने शरीर को मेरा मान लिया, तुम्हें लगा कि मैं शरीर हूं, शरीर नहीं रहेगा तो मेरा अस्तित्व कहाँ जाएगा। आपने अपने को शरीर के द्वारा खड़ा कर लिया, तो कुछ भी होता है तो आपको तकलीफ होती है।

प्रश्न: शरीर में दर्द उठता है तो हमें क्यों दर्द होता है? (P15-0193)

क्योंकि वह तुम्हारा है। शरीर को दर्द हो रहा है ना — तुमको क्या तकलीफ है? तुम शरीर हो क्या? शरीर नहीं हो, तो शरीर को पीड़ा हो रही है तो तुमको क्या तकलीफ? आप बोल दो ना उसको कि यह मेरा शरीर नहीं है — तो यह स्थिति बनानी पड़ेगी। मतलब तुम सबसे छूट के अपने शरीर में फंसे हो।

प्रश्न: शरीर के सुख-दुख से ऊपर जाने की क्रिया क्या है? (P15-0194)

अपने तरीके से कुछ भी चाहिए, उसका त्याग कर दो। भोजन जीने के लिए खाओ — जितने में जी सको; चर्बी बढ़ाने के लिए मत खाओ। कितना चाहिए, वह शरीर बताएगा। जब व्यक्ति उतना खाता है जितने में जी सके, तो उसकी जितनी चर्बी है वह शरीर खुद खा लेता है; शरीर एकदम हड्डी हो जाता है — मैंने ऐसी साधना की है। यह कहना बड़ा आसान है; जरा सा सिर दर्द होता है तो तुरंत टेबलेट खोजने लगते हो, जरा सा बुखार होता है दवा खोजने लगते हो, और बोलते हो मैं तो विदेह में चला गया हूं। जब स्थिति आती है तो आदमी तुरंत विचलित हो जाता है। इसलिए ज्यादा उतावला मत हो — इतना तेज मत दौड़ो कि मुंह के बल गिर जाओ, और इतना स्लो मत चलो कि कहीं पहुंच ना पाओ। ढोल को इतना मत पीटो कि फट जाए, और इतना ढीला मत करो कि बजे ही ना — मध्यम। किस तरीके से संगीत निकल सकता है, किस तरीके से मैं सध सकता हूं, किस तरीके से मेरी समझ बढ़ सकती है — उस तरीके से जीवन जीना है। आवेश में, जज्बात में आके कुछ नहीं बोलना है। पहले सुनो, गुनो, फिर धुनो — यह प्रक्रिया है।

प्रश्न: गुरुदेव, सबकी शरीर की स्थिति अलग-अलग है, सबकी मनोदशा अलग है — फिर आप कैसे कह सकते हैं कि एक रोटी पे सबका शरीर एक जैसा होगा?

(P15-0195)

शरीर वही है, मिलाजुला के। मनोदशा अलग हो सकती है। तुम यहां सुई मारोगे तो मेरे यहां भी लाल निकलेगा, तुम्हारे यहां भी — मनोदशा से ब्लड का कलर नहीं बदल जाएगा। उपवास रख लो तो तुम्हारा शरीर तुमको खाने लगेगा। झापड़ मारो — एक चिल्ला देगा, एक नहीं चिल्लाएगा, लेकिन चोट दोनों को लगी। पहले भूख लगेगी, बाद में प्यास; किसी को सोकर उठते ही भूख लगे, किसी को शाम तक, दो दिन बाद — लेकिन लगेगी; आप सह सकते हो, मैं नहीं सह सकता, बस इतना अंतर है। शरीर भोजन से ही बना है, इसमें मनोदशा काम नहीं करती। मनोदशा कर्म में काम करती है — जब हम बातचीत करते हैं और जब कोई काम का फैसला लेते हैं, उसमें मनोदशा बोल सकते हो। एक शब्द को हर जगह उपयोग मत करो, उसकी जगह है।

प्रश्न: आप कहते हैं कि यहां रहना ही साधना है। पर यहां तो कुछ नहीं कर रहे — फिर कौन सी साधना बन रही है? कुछ मिल रहा है क्या, ऐसा करने से फायदा क्या है? (P15-0196)

जितने दिन से आए हो, आप में कोई बदलाव नहीं आया? मन की स्थिति बदली ना? मानसिक बदलाव आया कि नहीं? वह बदलाव ना आया होता तो आप मुझसे बात भी नहीं कर पाते। बोझा हल्का हो गया — और मिला क्या? कुछ नहीं, क्योंकि मिलने को कुछ है ही नहीं। फायदा कोई नहीं है। धीरे-धीरे समझो — यह आवेश और जज्बात का मार्ग नहीं है।

प्रश्न: इनका तो सौभाग्य है कि आप मिले — आपका क्या है? (P15-0197)

अगर ये बताए हुए सतमार्ग पे चल रहे हैं तो मेरा भी सौभाग्य है, और नहीं चल रहे हैं तो मेरा दुर्भाग्य है। मैं दुर्भाग्य-सौभाग्य से परे हूं, लेकिन फिर भी व्यवहार में बोल रहा हूं। मैं सुबह से रात तक मेहनत करता हूं कि आप में बदलाव आए। अगर इतनी मेहनत, इतना तामझाम करके भी आप नहीं चल रहे, तो यह दुर्भाग्य है। एक व्यक्ति अगर 12 साल एक कपड़े में घूम ले — 25 से 40 तक, जीवन का मलाई पीरियड — तो उसे कुटिया बनाने की जरूरत ही नहीं। यह कुटिया, ये सब व्यवस्थाएं आप लोगों के लिए हैं। आप इनका सदुपयोग ना कर पाओ तो दुर्भाग्य मेरा नहीं, आपका है।

प्रश्न: गुरु जी, आप जो बता रहे हो उस तरीके से साधना कर रहे हैं। अब इस स्तर को धीरे-धीरे ऊपर कैसे उठाएं? (P15-0198)

बस धीरे-धीरे समझो। मैं अगर कहूं कि यह करो तो वह थोपा हुआ हो जाएगा। बस सत्संग सुनते रहो और यहां का जितना सिस्टम है, उसमें जीते रहो — यह ध्यान रखना — फिर देखो कैसे होता है, आराम से होगा। व्यवहारिक बातें नहीं। अगर स्वास्थ्य सही है, कोई रोग नहीं, तो 12 के बाद हल्का नाश्ता और रात को भोजन; व्यवहारिक बातें नहीं, सत्संग; आत्मिक चिंतन अपने आप होगा। कुछ करो मत, बस देखो — अपने आप सधोगे। स्वस्थ रहने के लिए पांच-छह घंटे की नींद चाहिए; यहां कोई जगाता भी नहीं, शारीरिक मेहनत भी नहीं, तो मेरे समझ से उठने के बाद फिर सोना नहीं चाहिए। आराम करना आपके ऊपर है, पर ना करो तो बहुत अच्छा। यहां का जितना सिस्टम बना है, उसमें जियो — या तो सधो या भागो, दो में से एक ही यहां होता है। भागते इसलिए हैं कि मोबाइल स्विच ऑफ हो जाता है और व्यवहारिक बातें करने को नहीं मिलतीं।

प्रश्न: गुरु जी, सठ और मूर्ख में क्या अंतर है? (P15-0199)

मूर्ख वह होता है जो समझाने के बाद भूल जाता है, समझने के बाद भी याद नहीं रहता। पर देखेंगे तो उसकी भी गलती नहीं है — उसकी समझने की क्षमता ही नहीं है, जब समझने का स्तर ही नहीं है तो बेचारा क्या करे। और अगर आप किसी को मूर्ख कह रहे हैं, तो मूर्ख आप हैं — क्योंकि आप समझ के कह रहे हैं कि इसको समझने की क्षमता नहीं है, फिर भी उसे मूर्ख बोला। वह तो अपनी स्थिति में जी रहा है, संघर्ष कर रहा है; आपने उसे मूर्ख बोला तो आप महामूर्ख। सठ मतलब सनकी — उसके पास समझ भी है, पर वह सनक जाता है, आवेश और जज्बात में आ जाता है; "सठ सुधरहिं सतसंगति पाई" — अच्छी संगत मिल जाए तो सठ सुधर सकता है। बेवकूफ वह है जिसके पास समझने की क्षमता है, समझाने वाला सामने है, पर समझना नहीं चाहता। और जो समझ गया कि यह बेवकूफ है, फिर भी उसे समझा रहा है, वह महा बेवकूफ है। ये स्टेजेस हैं, हर एक को इनसे गुजरना पड़ेगा। रामायण में राम बनने के लिए वशिष्ठ, विश्वामित्र, और रावण, कुंभकरण, मेघनाथ, विभीषण, हनुमान — ये सब बनते हुए जाना है; यही पात्र हम सब में भीतर भरे हुए हैं।

प्रश्न: गुरु जी, गृहस्थी में रहकर खुद को कैसे मिटाएं? क्या घर की जिम्मेदारियों को छोड़ना उचित है? (P15-0200)

घर की जिम्मेदारियां निभाते हुए लालच का त्याग कर दो। अपने तरीके से जो चाहिए, उसका त्याग कर दो।